राजाजी
की
लघु कथाएं

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

राजाजी
की
लघु कथाएं

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की
सरल-सुबोध एवं
शिक्षाप्रद कहानियां
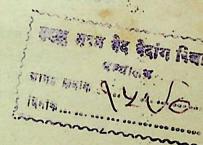
अनुवादिका
लक्ष्मी देवदास गांधी

१९७५
सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

•

तीसरी बार
१९७५

मूल्य : रु० ३.५०

•

मुद्रक
उद्योगशाला प्रेस, किंग्सवे,
दिल्ली-९

प्रकाशकीय

हिन्दी के पाठक राजाजी के नाम से भली-भांति परिचित हैं। उन्होंने अनेक पुस्तकों की रचना की है, जिनमें से कई हिन्दी में भी प्रकाशित हुई हैं। उनकी 'महाभारत-कथा' तथा 'दशरथ-नंदन श्रीराम' को तो हिन्दी-जगत में असाधारण लोकप्रियता मिली है। वास्तव में राजाजी की शैली इतनी रोचक है कि छोटी-से-छोटी घटना में भी जान पड़ जाती है।

इस पुस्तक में विद्वान लेखक की छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह किया गया है। ये कहानियां मामूली कहानियां नहीं हैं और केवल मनोरंजन की दृष्टि से नहीं लिखी गई हैं। इनमें कोई-न-कोई शिक्षा निहित है। अतः इनके पढ़ने से पाठकों को अनुभव होता है कि उनका समय व्यर्थ नहीं गया, उन्होंने कुछ पाया।

कहने को ये रचनाएं 'लघु' हैं, पर इनका संदेश बड़ा व्यापक है। छोटे-बड़े, जो भी पढ़ेंगे, अवश्य लाभान्वित होंगे।

प्रस्तुत पुस्तक का यह तीसरा संस्करण है। पुस्तक बहुत समय से अप्राप्य थी, लेकिन इसकी मांग बराबर हो रही थी। हमें हर्ष है कि पुस्तक पुनः पाठकों को उपलब्ध हो रही है। आशा है कि इसका पहले से भी अधिक व्यापक प्रसार होगा।

—मंत्री

विषय-सूची

मेहनत करके जिओ

एक गरीब किसान कृष्ण भगवान की पूजा बड़ी श्रद्धा-भक्ति के साथ किया करता था। उसकी निर्मल भक्ति देखकर भगवान उस पर प्रसन्न हुए। एक दिन उन्होंने प्रकट होकर किसान से कहा, "वत्स, तुम्हें जो चाहिए, वरदान माँग लो।"

एकाएक भगवान को यों खड़ा देखकर किसान हक्का-बक्का रह गया। उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या मांगे।

तब मुस्कराकर भगवान कहने लगे, "संकोच न करो, जो चाहिए, मांगो। लेकिन इतना ध्यान रखना कि जो कुछ मैं तुम्हें दूंगा, वह तुम्हारे पड़ोसियों को भी बिना मांगे मिल जायगा।"

किसान में हिम्मत आई। उसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, "हे गोपाल, इससे अधिक सौभाग्य की बात और क्या होगी कि जो मैं चाहूं, वह मुझे मिल जाय। प्रभो, मेरे मन में किसी के लिए ईर्ष्या-द्वेष नहीं। यह तो और भी खुशी की बात है कि जो मुझे मिले, वह मेरे पड़ोसियों को भी मिल जाय।"

भगवान बड़े प्रसन्न हुए और कहने लगे, तुम बड़े नेक हो, मैं यह जानता हूं। अब तुम्हें जो चाहिए वह वरदान मांगो। लेकिन ठहरो, क्या यह ठीक नहीं रहेगा कि इस मामले में तुम पहले अपनी घरवाली से भी सलाह कर लो, क्योंकि दिया हुआ वरदान बाद में बदला नहीं जा सकता।"

"ठीक है, प्रभो!" किसान ने उत्तर दिया, "घरवाली से पूछकर ही आपको बताऊंगा। सचमुच मैं इस समय ठीक से कुछ सोच भी नहीं पा रहा हूं। लेकिन यह तो बताइये, क्या आप मुझे कल तक का समय दे सकेंगे?"

"ज़रूर, तुम कल तक अपना फैसला कर लो।"

इतना कहकर भगवान अन्तर्धान हो गये।

किसान ने घर पहुंच कर रात को अपनी पत्नी से भगवान के वरदान की चर्चा की। दोनों ने खूब सोच-विचार किया कि भगवान से आखिर क्या मांगा जाय। बहुत देर के बाद वे किसी निर्णय पर पहुंच गये।

दूसरे दिन जब किसान ने फिर भगवान का ध्यान किया तब वह धीमे-धीमे मुस्कराते हुए प्रकट हुए और किसान से पूछने लगे, "क्यों भाई, क्या फैसला किया तुमने ?"

"हे करुणा के अवतार, मुझ पर अप्रसन्न न होना। मैं एक गरीब किसान हूं। बुद्धि भी मुझमें कम ही है। अपनी पत्नी से सलाह करके कुछ सोचा तो है।" किसान ने बात शुरू की।

"हां-हां, कहो, जो मांगोगे, वही तुम्हें मिलेगा। लेकिन मेरी शर्त याद है न ?जो चीज तुम्हें मिलेगी, वह तुम्हारे गांव-वालों को भी मिल जायगी।"

"दयानिधे, सब याद है। आप मुझे ऐसा वरदान दीजिए कि मेरा सन्दूक रुपयों से भर जाय। मैं उसमें से चाहे जितना निकालूं, पर वह कभी खाली न हो। मेरी यही इच्छा है।" किसान ने अपनी इच्छा बताई।

भगवान कुछ रुके, बोले, "भाई, रुपयों का लालच तुम्हें कब से सताने लगा ? तुम तो पहले कभी धन के लोभी न थे।"

लेकिन किसान ने विनय से आग्रह किया कि उसने जो वरदान मांगा है, वही उसे मिल जाना चाहिए।

"ऐसा ही होगा !" कहकर भगवान फिर वहां से गायब हो गये।

बात यह थी कि किसान की पत्नी का मत था कि यदि पास में पैसा हो तो दुनिया की सभी चीजें मिल जाती हैं।

किसान को भी यह बात जंच गई थी।

उसने घर में सन्दूक खोलकर देखा तो वह रुपयों से खचा-

खच भरा हुआ था।

दूसरे दिन किसान ने अपनी जेबों में खूब सारे रुपए भर लिये। वह कपड़े खरीदने बाजार चल दिया। उसे अपनी पत्नी के लिए कुछ साड़ियां खरीदनी थीं।

रास्ते में जितने भी लोग उसकी नजर पड़े, वे सब-के-सब बहुत खुश थे। तभी उसे वरदान की शर्त याद आ गई कि उस अकेले को वरदान थोड़े ही मिला हुआ है। दूसरों को खुश देख-कर उसे भी बड़ी खुशी हुई।

वह एक बजाज की दुकान पर पहुंचा और उससे बोला, "अच्छी साड़ियां निकालकर दिखलाइये।"

"क्या दोगे ?" दुकादार ने किसान से पूछा।

"तुम जो दाम मांगोगे, वह तुम्हें मिल जायगा। लाओ, साड़ियां निकालो।" किसान ने जवाब दिया।

लेकिन दुकानदार पर किसान के जवाब का कोई असर न हुआ। वह कहने लगा, "दाम ? हमें पैसा नहीं चाहिए। रुपए-पैसों की अब कोई कीमत नहीं रही। वह तो सबके पास भरा पड़ा है। मुझे तो यह बताओ कि साड़ियों के बदले में तुम मुझे अनाज कितना दे सकते हो ?"

"रुपयों की कोई कीमत नहीं रही ! यह कैसे हो सकता है ?" किसान ने अचरज में पड़कर जवाब दिया। उसे लगा कि शायद दुकानदार उससे मजाक कर रहा है।

दुकानदार ने उत्तर दिया, "भाई मेरे, हरेक के पास काफी रुपया-पैसा हो गया है। अब किसी को उसकी जरूरत नहीं रही। इसलिए उसकी कीमत भी गिर गई है।"

दुकानदार ने उसे काफी समझाया, मगर किसान की समझ में यह बात नहीं आई। वह वहां से दूसरी, दूसरी से तीसरी, इस प्रकार कई दुकानों पर गया, लेकिन सबका एक ही उत्तर था, "गेहूं, चावल, दाल, चना कुछ भी लाओ, रुपया हमें नहीं चाहिए।"

बेचारा किसान परेशान हो गया। जब कोई चीज खरीदने जाता, उसके सामने यही कठिनाई आती। सब पैसा लेने से इन्कार कर देते।

आखिर एक दिन उसने फिर भगवान का ध्यान किया और प्रार्थना की, "हे प्रभो, तुमने तो मुझे बड़ा धोखा दिया। ऐसे वरदान को लेकर मैं क्या करूं?"

भक्त की टेर सुनते ही भगवान प्रकट हुए और कहने लगे, "भाई, मैंने तो तुम्हें धोखा नहीं दिया। तुमने आप अपने को धोखे में डाला है।"

"लेकिन प्रभो, अब हम क्या करें? इस प्रकार तो हम सब मर जायंगे।" किसान ने गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की।

"तो फिर वरदान वापस ले लूं?" भगवान ने हँसते हुए पूछा।

किसान की जान-में-जान आई। कहने लगा, "हां, भगवन्, अपनी माया समेट लीजिये। मुझे नहीं चाहिए वरदान। मैं तो हमेशा की तरह अपने हाथ-पैर की मेहनत पर ही जीना चाहता हूं।"

श्रीकृष्ण हँसते हुए बोले, "यही ठीक बात है। तुम भी मेहनत करके जिओ और दूसरे लोग भी मेहनत करके जिंदा रहें। इसी में दुनिया की भलाई है।"

अलग होने का नतीजा

सेठ लक्ष्मीदास जब परलोक सिधारे तब उनके चारों लड़के बड़े हो गये थे। उन सबकी शादी हो गई थी। बहुएं घर में आ गई थीं। चारों भाई अपनी पत्नियों के साथ एक ही घर में मिल-जुलकर रहते थे।

धीरे-धीरे चारों बहुओं में छोटे-मोटे झगड़े होने लगे। शुरू में भाई इस पर ध्यान नहीं देते थे। जानते थे कि बीवियां कहना माननेवाली नहीं हैं, लेकिन आगे उनके झगड़े बढ़ने लगे। अक्सर उनकी रातें क्लेश में कटती थीं।

कभी-कभी घर में इतना शोर मच जाता कि अड़ोस-पड़ोस के लोग भी तंग आ जाते।

पिता काफी धन छोड़ गये थे। एक अलग कमरे में रुपये और जेवर सन्दूकों में अच्छी तरह से भरे हुए थे। एक चोर को इस बात का पता लग गया। वह इसी ताक में था कि कब दाँव लगे और वह दीवार में सेंध लगाकर उन्हें निकाल ले जाय। लेकिन उसको मौका ही नहीं मिलता था। घर में रोज-रोज झगड़ा और रोना-धोना होने के कारण कोई-न-कोई जगा ही रहता था।

बड़े भाई ने अपने छोटे भाइयों को काफी समझाया, लेकिन उन पर कोई असर न हुआ था। उनका कहना था कि हमारा अलग हो जाना ही अच्छा है। ये औरतें रोज-रोज झगड़ती रहती हैं। यदि हम सब अलग-अलग रहने लगें तो यह झगड़ा जरूर कम हो जायगा।

फिर भी बड़ा भाई बंटवारे को टालता रहा। आखिर एक दिन उसकी पत्नी ने समझाया कि साथ रहने में कोई सार नहीं है। बंटवारा कर दीजिए। रोज-रोज के लड़ाई-झगड़े का तो खात्मा हो।

बड़ी अनिच्छा के साथ बड़े भाई को जायदाद के हिस्से कर देने पड़े।

उस बड़े घर को बीचोंबीच में दीवारें खड़ी करके चार हिस्सों में बांट दिया गया। सबका रसोई-पानी अलग-अलग होने लगा।

पड़ोसी कहने लगे, "अब चैन मिला। चीखना-चिल्लाना बन्द हुआ। अब रात को आराम से सो सकेंगे।"

इस तरह एक सप्ताह अच्छी तरह गुजर गया।

चोर ने सोचा—यह ठीक मौका है। अमावस के दूसरे रोज रविवार की रात को दो बजे वह घर में घुस गया। चूंकि दीवार नई खड़ी की गई थी, इसलिए आसानी से उसकी कुछ ईंटें हटाकर उसने अपने लिए रास्ता बना लिया। घर वाले सब गहरी नींद में सो रहे थे। चोर हरेक कमरे में घुसा और बाहर खड़े अपने साथी को सन्दूक उठा-उठा कर देता गया। इस प्रकार उसने तमाम रुपया और जेवर बाहर निकाल लिया। अपना सब काम पूरा करके वह बड़े भाई के रसोईघर में घुसा। वहां उसने आम के अचार के साथ खूब बासी पूरियां खाईं, मटके का पानी पिया और चलता बना।

सवेरे उठते ही चारों औरतें हाय-हाय करने लगीं!

गांववाले मन-ही-मन खुश हुए। सेठजी के धन से वे डाह करते थे। फिर भी खुशी को छिपाकर उन्होंने उनके साथ हमदर्दी प्रकट की।

इस सब कांड के बीच एक कौआ दीवार पर बैठा 'कांव-कांव कर रहा था, मानो कह, रहा था, "देखो, अलग होने का क्या नतीजा निकलता हैं!"

सुन्दर बस्ती, लेकिन...

महेशपुर गांव में दो दुष्ट रहते थे। दोनों एक ही गली के वासी थे। एक का घर पश्चिम की ओर था तो दूसरे का पूरब की ओर। लेकिन पड़ोसी होते हुए भी वे एक-दूसरे पर बुरी तरह शक करते थे।

आस-पास के गाँववालों से भी उनका व्यवहार अच्छा न था। वे अक्सर उन्हें धोखा देते और लूटमार करते रहते थे।

... ...

पश्चिम के घरवाले की बीवी ने एक दिन अपने पति से कहा, "कहीं यह आदमी चुपके से किसी दिन सेंध लगाकर हमारा घर न लूट ले ?"

पूरब के घरवाले की औरत भी शंकित थी। वह भी अपने पति को सचेत करती हुई बोली, "देखना, यह आदमी किसी-न-किसी दिन हमारे घर को आग लगाकर ही छोड़ेगा।"

अपनी-अपनी औरतों की बातों से चिन्तित होकर दोनों दुष्टों ने खूब सारी लाठियाँ और बन्दूकें अपने-अपने घरों में जमा कर लीं और वे सदा एक-दूसरे से डर कर रहने लगे।

... ...

"इन बन्दूकों और लाठियों से क्या बनेगा ? उस दुष्ट के पास तो ये चीज़ें हमसे भी अधिक हैं। इसके अलावा उसके साथ तो कई गुंडे भी हैं। तुम्हारी उनके सामने कुछ भी नहीं चलेगी।" पश्चिम के घरवाले की औरत ने पति से एक दिन अपनी शंका प्रकट की।

"तब क्या किया जाय ?" पति ने पत्नी से ही सलाह माँगी।

पत्नी बताने लगी, "तुम चिन्ता न करो। मैंने एक सपेरे से बातें कर ली है। वह एक जहरीले सांप को पिटारी में बन्द करके हमें दे देगा। उससे हम अपने पड़ोसी से बचे रहेंगे। यदि उसने हमें नुकसान पहुंचाने का जरा भी इरादा किया तो हम फौरन सांप को उसके घर में छोड़ आयेंगे।"

"यह तुमने अच्छा इन्तजाम कर लिया," पति ने प्रसन्न होते हुए कहा, "लेकिन सांप हमारा कहना थोड़े ही मानेगा !"

"तुम्हारा सोचना सही है। लेकिन मैंने सपेरे से इस शंका का भी समाधान कर लिया है। वह कहता था कि यदि हम सांप को रोज कुछ-न-कुछ खिलाते रहें तो वह हमारे कहे में हो जायगा।" पत्नी ने बताया।

पति ने फिर पूछा, "लेकिन क्या सपेरे की बातों पर विश्वास करना चाहिए ?"

"क्यों नहीं ? हमारा सपेरा कोई ऐसा-वैसा नहीं है। आप निश्चिन्त रहें।"

बस, उसी दिन से वे बिना किसी को बताये चुपके-चुपके अपने घर में साँप पालने लगे।

... ...

सपेरा था बड़ा चालाक। उसने एक अन्य पिटारी में एक दूसरे सांप को बन्द किया और उसी तरह पट्टी पढ़ाकर वह उसे पूरब के घरवालों को दे आया।

कुछ दिनों बाद दोनों दुष्टों को मालूम हो गया कि दोनों के पास जहरीले साँप हैं।

सारे गांव में यह बात फैल गई। लोगों ने विरोध किया, "इस तरह सांपों को घर में पालना गांव भर के लिए खतरे की बात है।"

लेकिन दुष्टों को गांव वालों की क्या परवा होनी थी !

पश्चिम के घरवाले का कहना था कि अपनी परेशानी हम ही जानते हैं। गांववाले हमारी तकलीफ को क्या जानें ! हम सांप को अवश्य रखेंगे !

लेकिन जब पूरब के घरवाले ने यह उपाय सुझाया कि

आओ, हम दोनों सांपों को मय पिटारी के जला दें तो पश्चिम के घरवाले ने कहा, "इस धोखेबाज पर कैसे विश्वास करूं ? न जाने इसके पास कितने सांप पिटारियों में और बन्द हों !"

इसके विपरीत पूरब के घरवाले का यह कहना था कि चूंकि सांप का पालना पहले पश्चिम के घरवाले ने शुरू किया है, इसलिए पहले उसी को सांप को मार डालना चाहिए।

गांव की पंचायत जुड़ी। मगर उसमें भी इस बात पर कोई फैसला न हो सका। हां, शराब के दौर वहां खूब चले। नतीजा यह हुआ कि सारे गांव में भय छा गया और उन दुष्टों की तो नींद हराम हो गई।

इसी बीच उस गांव में एक स्वामीजी का शुभागमन हुआ। उन्होंने बताया कि तुम योंही घबरा रहे हो। इस झगड़े का फैसला तो बहुत आसान है। पहले एक आदमी अपने सांप को जला दे, बाद में दूसरा भी वैसा ही करे, लोगों का डर दूर हो जायगा। यों डरते रहने और रातों जागकर सेहत खराब करने से क्या लाभ ?

"इस साधु बाबा को क्या पता कि यह दुष्ट पड़ोसी किस तरह का आदमी है। यह तो हम ही जानते हैं।" पश्चिम के घरवाले की औरत कहने लगी, "यदि हमने अपना सांप जला दिया तो पूरबवाला हमारे ऊपर जहरीला सांप छोड़कर हमें मार ही डालेगा।"

पूरब के घरवाले की पत्नी भी कम नहीं थी। अपने पति से कहने लगी, "देखती हूं, क्या होता है। वह दुष्ट पड़ोसी शायद हमारा घर जलाने की ताक में है। लेकिन मैं भी एक

ही हूं। मैं उससे भी पहले पीछे की तरफ से जाकर चुपचाप उसके घर में सांप छोड़ आऊंगी।"

इस तरह दोनों घरवालों को न दिन में चैन था, न रात में नींद। दोनों ही डरे हुए थे। दोनों ही परेशान थे। नतीजा यह हुआ कि एक के बदले अब दोनों घरों में कई-कई सांप पलने लगे।

लोगों में आतंक बढ़ता जा रहा था। माताएं चिन्तित थीं कि कहीं उनके बच्चों को सांप न डस ले, क्योंकि अब एक साथ कई जहरीले सांप गांव में जमा हो गये थे। लेकिन किसी की भी हिम्मत उन दुष्टों से यह कहने की न थी कि तुम ऐसा क्यों करते हो।

दोनों दुष्ट और उनकी बीवियों का बुरा हाल था। गांव के लोग भी दुःखी थे। न कोई खेती पर ध्यान दे पाता था, न धंधे-रोजगारों पर।

दैव का प्रकोप कहो या आशीर्वाद, गांव में दुष्काल पड़ गया। महामारी फैल गई। सारा गांव नष्ट हो गया।

... ...

वर्षों बाद अब पुरातत्व विभाग के लोग उस गांव के अवशेषों को खोद-खोदकर निकाल रहे हैं। वे इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि इतिहास से पहले काल में यहां एक सुन्दर बस्ती बसी हुई थी। लेकिन...

ज्ञानोदय

भारद्वाज वंशी एक ब्राह्मण युवक तप करने लगे। उम्र तो उनकी छोटी थी, किन्तु महत्वाकांक्षा यह थी कि वह भी प्राचीन युग के ऋषि-मुनियों की शैली में एक बहुत ही सुन्दर नया उपनिषद् लिखें। उनकी यह इच्छा दिन-प्रतिदिन बलवती होती गई, लेकिन उसकी सिद्धि के लिए उन्हें क्या करना चाहिए, यह उनकी समझ में नहीं आता था। अन्त में सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी का ध्यान लगाकर वह तप करने लगे।

एक दिन ब्रह्माजी प्रकट हुए और पूछने लगे, "वत्स, तुम्हें क्या चाहिए ?"

मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं एक उपनिषद् लिखूं। उसके लिए क्या करना चाहिए, यह आप कृपा कर मुझे बतायें।" भारद्वाज युवक ने ब्रह्मा से पूछा।

"अभी तो तुम जो उपनिषद् हमारे यहां हैं, उन्हीं का खूब अध्ययन करो।" चतुरानन ने कहा।

"लेकिन पुराने उपनिषदों के पढ़ने से मुझे कोई नई बात नहीं सूझेगी। पुराने विचारों में ही मेरा मन लग जायगा। फिर नये सिद्धान्तों के लिए मेरे मन में स्थान नहीं रहेगा और मैं कोई नई बात दुनिया को नहीं बता सकूंगा। पुरानी बातों को ही दोहराने से क्या लाभ ? उससे मेरी महत्वाकांक्षा पूरी नहीं होगी।" भारद्वाज युवक बोले।

"तुम्हारी बात भी ठीक है," ब्रह्मा कहने लगे, "परन्तु अभी उपनिषद् मत पढ़ो। कुछ समय तक गृहस्थाश्रम में रहो। उस जीवन को पूरी तरह से चलाना। वहां तुम्हें नई-नई बातें सूझ सकती हैं।"

"यह असम्भव है।" तपस्वी युवक कहने लगे, "मैं तो तपस्वी हूं। मैं कैसे गृहस्थाश्रम में उतर सकता हूँ ? संसार के जाल में फंस गया तो वहां से छूटना मुश्किल हो जायगा। फिर नया ज्ञानमय उपनिषद् नहीं लिखा जा सकता। मेरी तपश्चर्या निरर्थक हो जायगी।"

ब्रह्मा के चारों मुख मंद हास से प्रफुल्लित हो उठे और यह कहते हुए कि "भैया, मुझे तो उपनिषद् लिखना तुम्हारी शक्ति के बाहर लगता है, इस निरर्थक आशा को छोड़ दो," वह वहां से अंतर्धान हो गये।

लेकिन तपस्वी का इतने से समाधान न हुआ।

तभी वहां एक भील आया। वह बहुत ही थका हुआ लगता था। कहने लगा, "महाराज, प्यास के मारे मेरा गला

सूख रहा है। थोड़ा-सा पानी पिला दीजिये।"

तपस्वी ने अपना कमंडल उठाया, देखा उसमें पानी न था। उन्होंने भील से कहा, "जरा ठहरो, तालाब से अभी तुम्हारे लिए पानी ला देता हूं।"

"नहीं, महाराज, तालाब के पानी से मेरी प्यास नहीं बुझेगी। मुझे वह नहीं चाहिए।" भील ने मना कर दिया।

"तो यहां पास में नदी भी है। तुम अगर रुको तो तुम्हारे लिए नदी से पानी ले आता हूं।" तपस्वी ने कहा।

"नहीं," भील बोला, "आप नदी-तट पर गये तो वहां से लौटने का क्या भरोसा ! नदी-किनारे तो बड़े-बड़े जंगली जानवर शिकार की ताक में छिपे रहते हैं।"

तपस्वी हैरान हुए कि यह आदमी आखिर चाहता क्या है। वह सोच ही रहे थे कि भील वहां से एकाएक गायब हो गया ! तपस्वी सोच में पड़ गये—यह क्या बात हुई !

"अच्छा अब समझ में आया," युवक तपस्वी मन-ही-मन बुदबुदाये, "तो भील के वेश में यह ब्रह्माजी थे ! मुझे समझाने के लिए उन्होंने यह रूप धारण किया ! 'मुझे तालाब का पानी नहीं चाहिए ! मैंने भी तो यही कहा था कि मुझे वर्तमान उपनिषदों से संतोष नहीं होगा।"

तपस्वी को याद आया, "मैंने यह भी तो कहा था कि मैं सांसारिक जीवन का भी अनुभव नहीं करूंगा, तब मुझे उसमें फंस जाने का डर था। सांसारिक जीवन भी तो एक नदी का तरह प्रवहमान और अस्थिर है। मैंने कह दिया था कि उससे ज्ञान-प्राप्ति का प्रयत्न मैं न करूंगा। इसी तरह भील ने भी

नदी का पानी पीने से इन्कार कर दिया। यदि उसे सचमुच अपनी प्यास बुझानी होती और जब उसने यह भी देख लिया था कि कमंडल खाली था, तो वह अवश्य तालाब या नदी का पानी पीना स्वीकार कर लेता, क्योंकि दूसरा कोई उपाय ही नहीं था। हां, अब मुझे ज्ञान हुआ!"

युवक यह कह ही रहा था कि ब्रह्माजी पुनः प्रकट हुए और कहने लगे, "मैं अब प्रसन्न हूं।"
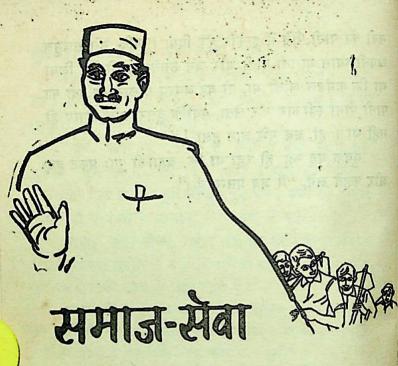
समाज-सेवा

पद्मपुर का कालेज विख्यात था, लेकिन इस नगर को आप नक्शे में या पुस्तकों में ढूंढ़ने का प्रयत्न न कीजिये। यह असली नाम नहीं है।

एक दिन इस कालेज के कुछ छात्र समाज-सेवा करने को निकले। उनका नेतृत्व गणित के आचार्य कर रहे थे।

धीमरपट्टी गांव उनके पास ही था। भारी वर्षा से वहां के निवासी पीड़ित थे। कई मकान गिर गये थे। इन लोगों ने वहीं जाने का कार्यक्रम बनाया।

कालेजवाले धीमरपट्टी पहुंचकर धम-धम करके लारी से नीचे कूद पड़े। गांववाले भी उनके पास इकट्ठे हो गये और

गणिताचार्य से कहने लगे, "बाबूजी, हमारे मकान बुरी तरह चू रहे हैं। हम बहुत कष्ट पा रहे हैं।"

कालेजवालों ने कहा, "घबराओ नहीं, सबकुछ ठीक कर दिया जायगा।"

"छत पर चढ़ जाओ और देखो कि कहां क्या खराबी है।" गणिताचार्य ने छात्रों को हुक्म दिया। लेकिन उनका आदेश पालन करने में छात्रों ने तत्परता नहीं दिखाई। लड़कों को ऐसी मुसीबत से पहली बार ही पाला पड़ा था।

"खड़े क्यों हो?" अध्यापक बोले, "चलो, मैं चढ़कर बताता हूं।"

गणिताचार्य को छत पर चढ़ते देखकर लड़कों की भी हिम्मत हुई। वे सब-के-सब छत पर चढ़ गये। लेकिन तभी घरवाली औरत ने चिल्ला-चिल्लाकर कहना शुरू कर दिया, "भई, उतर जाओ। बारिश के कारण तमाम खपरैल गीली हो गई है। कमज़ोर है। आप लोगों के वज़न से टूट जायगी।"

और वही बात हुई। जहां-जहां कालेजवालों के पैरों का दबाव पड़ा, खपरैल टूट गई। गणिताचार्य को बहुत बुरा लगा। उन्हें खपरैलों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।

मकान का मालिक किसान भी चिल्ला उठा, "उतर आइये, उतर आइये।"

गणिताचार्य ने किसान से कहा, "आप घबरायें नहीं, सबकुछ ठीक हो जायगा। नई खपरैलों के लिए हम अरजी लिखकर भेज देंगे और ठीक तरह से मरम्मत का काम हो जायगा।

समाज-सेवा करनेवाले शहर को लौट आये। उस रात को

भी धीमरपट्टी में भीषण वर्षा हुई। खपरैलवाले उस गरीब के बाल-बच्चे बहुत परेशान थे। घरवाली ने अपने पति को डांटकर कहा, "तुमने उन छोकरों को छत पर जाने ही क्यों दिया ? देखो, हमारा क्या हाल हो रहा है !"

बेचारा गरीब किसान क्या करता ! उसका दोष भी क्या था ? गणिताचार्य के अज्ञान और 'समाज-सेवा' के उत्साह से काम बिगड़ गया था। इधर शहर को लौटते ही कालेजवालों ने नई खपरैलों के लिए अरजी लिख भेजी। कुछ समय बाद सरकार की तरफ से नामंजूरी की चिट्ठी आ गई। लाचार होकर उन लोगों ने आपस में कुछ चंदा इकट्ठा किया। लेकिन इस लिखा-पढ़ी में महीनों निकल गये।

कालेजवालों ने यह सबक सीखा कि खपरैल जब खूब भीगी हुई हो तो उस पर खड़ा होना हानिकारक है।

वे दुबारा धीमरपट्टी पहुंचे। किसान और उसकी घरवाली को बुलाकर उन्होंने खपरैलों के रुपये दे दिये। औरत बहुत खुश हुई और उसने लड़कों को हार्दिक आशीर्वाद दिया।

अध्यापक भी प्रसन्न थे, क्योंकि उन्हें डर लग रहा था कि कहीं और डांट न खानी पड़े। तब छात्रों ने निश्चय किया कि बिना समझे-बूझे किसी क्षेत्र में प्रवेश न करेंगे।

खपरैल कहां और कैसे बनती है, यह जानने के लिए वे सब गांव के कुम्हार के घर गये। गीली-चिकनी मिट्टी और चाक के सहयोग से कुम्हार जो चमत्कार पैदा कर रहा था, उसे देखकर वे आश्चर्य में पड़ गये।

लेकिन तभी आचार्यजी ने उन्हें सचेत किया, "चलो, देर हो रही है। अब लौटना चाहिए।"
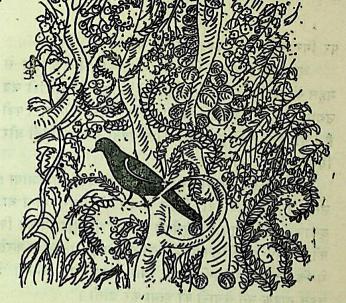
नटवर का नृत्य

राजा नन्दि वर्मा के राज-उद्यान में एक कोयल रहा करती थी। वह बड़ी मीठी आवाज में गाया करती थी। राज-कुमारी कोयल को बड़ा प्यार करती थी।

एक बार महल में बड़ी धूमधाम से दीवाली मनाई गई। खूब पटाखे चले। लेकिन असावधानी से महल के एक कोने में आग लग गई। सब लोग पानी ला-लाकर आग बुझाने लगे। कोयल बेचारी अपनी आदत के अनुसार तब भी गाती रही। राज-कर्मचारियों को यह देखकर बड़ा क्रोध आया। "महल में आग लगी है और इसे गाने की सूझ रही है!" कहकर एक ने उसके जोर से पत्थर दे मारा। बेचारी कोयल जमीन

पर गिर पड़ी और छटपटाकर मर गई।

आग फौरन बुझा दी गई, लोग खुश थे कि आग से महल को कोई विशेष हानि नहीं हुई, लेकिन राजकुमारी जब उद्यान में आई तब उसने देखा कि कोयल धरती पर मरी पड़ी है। वह दुःख से विह्वल होकर अपने पिता के पास पहुंची और विलाप करने लगी।

राजा को सारी बात सुनाई गई। उसे बड़ा क्रोध आया। उसने उस कर्मचारी को, जिसने कोयल को पत्थर मारा था, बुलाकर कहा, "तुम बड़े मूर्ख हो। इतना भी नहीं जानते कि कोयल सिर्फ गा ही सकती है। उससे क्या तुम यह आशा करते थे कि वह घड़े में पानी ढोकर आग बुझाने लग जायगी? तुमने नाहक उस बेचारी की हत्या कर डाली।"

"राजन्, क्षमाप्रार्थी हूँ। अत्यधिक राजभक्ति में मैं यह भूल गया कि कोयल में बुद्धि नहीं होती। वह केवल गाना ही जानती है। सचमुच मैं मूर्ख बन गया।" कर्मचारी ने राजा से गिड़-गड़ाकर क्षमा-प्रार्थना की।

राजा के ही पास मंत्री खड़े थे। उन्होंने उक्त कर्मचारी से कहा, "लोग बस अपना-अपना काम समझते हैं। कोयल गाना जानती है। तुमको केवल महल की रखवाली करनी आती है। मुझे केवल दंड देना आता है। तुम्हारी नौकरी आज से समाप्त हुई। अपनी वर्दी उतारकर घर चले जाओ।"

लेकिन राजकुमारी ने राजा से विनती की, "कर्मचारी को नौकरी सें न हटाया जाय। एक तो कोयल मर गई। अब इसके बीवी-बच्चे भी रोतें रहें, यह मेरे लिए असह्य हो जायगा।

मैं नहीं चाहती कि मेरे कारण कोई दुःखी हो।"

"तुझे तो बस रोना ही आता है।" राजा ने अपनी बेटी को पुचकारकर कहा।

... ...

महादेव-पार्वती राज-उद्यान में खड़े-खड़े इस घटना को देख रहे थे। राजा की बात सुनकर महादेव पार्वती से कहने लगे, "क्यों देवी, तुम्हें भी तो जरा-जरा-सी बात पर रोना आ-जाता है न ?"

पार्वती ने तत्काल उत्तर दिया, "आप ही लोगों से ऐसी गलतियां करवाते हैं। सारा दोष आपका ही है। मुझे तो ऐसे लोगों पर दया आ जाती है। मेरा यही धंधा समझ लीजिये।"

महादेव कहने लगे, "हां, प्रिये, यह मेरे नृत्य का प्रभाव है। दूर से देखनेवालों को ही मेरे नृत्य में दोष दिखाई देंगे। मैं यह सब खेल तुम्हें खुश करने के लिए खेला करता हूँ।"

प्रेम में डाह

एक शेरनी थी। वह जंगल में रहती थी। बेचारी बूढ़ी हो गई थी। उसके शरीर में अब पहले जैसी ताकत न थी। उसने अपनी जवान बेटी का, एक नौजवान शेर ढूंढ़कर, ब्याह कर दिया था। शुरू-शुरू में वह खुश रही। बेटी और उसका पति शिकार करके लाते और उसमें से बूढ़ी शेरनी को भी

हिस्सा मिल जाता। उसे मेहनत करने की जरूरत न रही। बेटी अपनी मां का अच्छी तरह खयाल रखती। लेकिन धीरे-धीरे बूढ़ी शेरनी के मन में डाह पैदा होने लगी। वह सोचने लगी कि उसकी बेटी अब उससे पहले जैसा प्यार नहीं करती। वह सदा अपने पति के साथ ही घूमती-फिरती है। उसकी तरफ कम ध्यान देती है। बूढ़ी शेरनी देवी का ध्यान करके अक्सर अपनी लड़की की शिकायत किया करती थी।

लेकिन वास्तव में यह बात न थी। जवान शेरनी मां को खूब चाहती थी। जितना हो सकता था, वह उसका कामकाज देख लेती थी। उलटे उसके पति शेर को यह शिकायत थी कि वह सदा अपनी मां की ही फिक्र में लगी रहती है और उसकी तरफ ध्यान नहीं देती।

एक दिन फिर बूढ़ी शेरनी ने देवी से अपनी लड़की की शिकायत की।

सुनकर देवी कहने लगी, "बेटी, तेरी पुकार सुन कर मैं चली आई हूं। तू बड़ी भाग्यशालिनी है। तेरी बेटी तुझको बहुत चाहती है। लेकिन तेरे लिए वह अपने पति का त्याग नहीं कर सकती। तूने ही तो उसका उससे विवाह किया है।"

"जीहां, माता, आप ठीक कहती हैं, लेकिन मुझे यह आशा न थी कि मेरी लड़की शादी के बाद मुझे एकदम भूल जायेगी। मैं जल्दी-से-जल्दी इस दुनिया से चली जाना चाहती हूं।" बूढ़ी शेरनी रोने लगी।

"तू बड़ी बेवकूफ है। बेकार ऐसी बातें करती है।" देवी ने उसे समझाया, किन्तु शेरनी ने अपना रोना न छोड़ा। दुःख

में ही वह एक दिन मर गई।

देवी की कृपा से बूढ़ी शेरनी ने इस बार आदमी का जन्म लिया। वह एक अच्छे घर में बहू बनकर गई। लोग उसको कमला कहकर पुकारने लगे।

कमला ने अपने नये घर में देखा कि उसका पति सुन्दर-सिंह अपनी मां और बहनों को बहुत चाहता है। कमला घबराने लगी कि वह अपने प्यारे पीहर को छोड़कर कहां आ पहुंची! वह अपने माता-पिता को कोसने लगी कि कैसे घर में उन लोगों ने उसे धकेल दिया! उसका खयाल था कि पति उसे नहीं चाहता।

एक दिन कमला ने अपने पति से शिकायत की, "तुम कमाते तो हो, लेकिन अपनी कमाई का सारा पैसा मां को क्यों दे देते हो? क्या यही ठीक बात है? मुझे भी तो अपने खर्चे के लिए कुछ पैसा चाहिए।"

सुन्दरसिंह ने कहा, "सभी लोग अपना कमाया हुआ पैसा अपनी मां को देते हैं। इसमें खराबी की क्या बात है?"

"तुम्हें नुकसान नहीं दिखाई देता? तुम्हारी मां तो, जो कुछ तुम उसे देते हो, चुपके से अपनी बेटियों को भेज देती है। उसे तुम्हारी फिक्र बिलकुल नहीं है।" कमला बोली।

"अगर कोई मां अपनी बेटियों को प्यार करे तो उसे देख कर दूसरों को जलना नहीं चाहिए।" सुन्दर ने समझाया।

लेकिन इससे कमला के मन को तसल्ली नहीं हुई। थोड़े दिन बाद उसके एक सुन्दर बालक पैदा हुआ। किन्तु मन और शरीर की कमजोरी के कारण वह बीमार पड़ गई और

बच्चे के जन्म के कुछ ही दिनों बाद बेचारी मर गई।

मरने के बाद उसकी पत्नी आत्मा देवी के पास पहुंची।

देवी ने पूछा, "क्यों, अक्ल आई ? जब शेरनी थी तब तू अपनी लड़की से नाराज थी कि पति-पत्नी अपने प्यार में मां को भूल जाते हैं। अब बता, मनुष्य-जन्म कैसा रहा ?"

"हां, अक्ल आई।" शेरनी कहने लगी, पति और पत्नी का प्रेम देख कर मां को डाह नहीं करनी चाहिए। यह मैंने अब सीखा। देवी, मुझे फिर से शेरनी बना दो। मैंने देख लिया कि आदमी बहुत बुरे होते हैं। मैं उनके बीच जाना नहीं चाहती।"

लेकिन देवी ने मुस्कराकर कहा, "तुम्हारा पागलपन अभी भी कम नहीं हुआ। तुम कहीं भी न जाओ। अब मेरे पास ही सुख से रहो।"
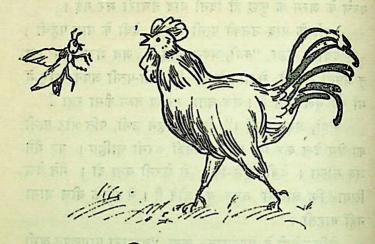
आलसी सूरज

"बाप रे बाप ! आज तो मैं बहुत ही थक गई ! मेरी भी जिन्दगी क्या है !" मक्खी अपने मित्र मुर्गे से कहने लगी।

मुर्गा अपने पंजों से जमीन खुरच रहा था। मक्खी की बात सुनकर बोला, "क्यों ? आज तुम्हें इतनी उदासी और थकावट क्यों मालूम हो रही है ?"

"अरे, तुम्हें मेरी मुसीबतों का क्या पता ! आज स्टेशन से मंडी तक एक ठेले को खींचना पड़ा।" मक्खी बताने लगी।

"क्यों, तुम्हें यह काम कैसे करना पड़ गया ? छकड़े पर क्या लदा था ?" मुर्गे ने पूछा।

मक्खी ने उत्तर दिया, "तुम तो मिट्टी खोदकर कीड़े खाते

रहते हो। तुम्हारे लिए ये सब बातें समझना कठिन है। फिर भी बताती हूँ। सुनो, मैंने एक आदमी को ठेला खींचते हुए देखा। मैं उसकी पीठ पर बैठ गई। उसके साथ मैं भी वह ठेला खींचकर मंडी तक लाई हूं।"

"अरे, तुममें इतनी ताकत कहाँ से आ गई ? छकड़ा तो, मैंने सुना है, बहुत भारी होता है !" मुर्गे ने अचरज के साथ पूछा।

"भाई, काम करने के लिए दिल और उमंग चाहिए। ताकत तो अपने-आप आ जाती है।" बड़े घमंड से मक्खी कहने लगी, "स्टेशन से मंडी तक कई जगह सड़े-गले फल दूकानों पर टंगे हुए दिखाई दिये। मुंह में पानी भर आया। कई बार सोचा भी कि रुक जाऊं। लेकिन इस विचार से कि मेरे बिना ये लोग ठेला न खींच पायंगे, मैं कहीं नहीं रुकी।"

"सचमुच, तुममें बड़ी दया है। मैं भी कई बार कोशिश कर चुका हूं कि कीड़ों को खाना छोड़ दूं। लेकिन निभता नहीं। ये कीड़े कमबख्त, बड़े स्वादिष्ट होते हैं।" मुर्गे ने कहा।

मक्खी तेज होकर कहने लगी, "यह जमाना भले आदमियों का नहीं है। देखो न, लोग नई-नई दवाइयों से हमें बुरी तरह से नष्ट करने पर तुले हुए हैं। कोई पूछे कि हमने इनका क्या बिगाड़ा है ?"

मुर्गे ने बताया, "लोग तुम्हें इसलिए मारते हैं कि तुम्हारे हाथ-पैरों में रोग पैदा करने वाले कीटाणु चिपके रहते हैं। उनसे वे डरे हुए हैं।"

"तो क्या लोग यह चाहते हैं कि हम अच्छी तरह नहा-धोकर इनके पास आया करें ? यह तो हो नहीं सकता। नहाने से हम मर न जायंगी ?" मक्खी बोली।

"तुम ठीक कहती हो।" मुर्गे ने कहा। उसे मक्खी की बातों से बड़ा दुःख हुआ।

लेकिन मक्खी कहती गई, "हमें आजकल भरपेट भोजन नहीं मिलता। लोग कूड़े के कनस्तरों को अब ढंककर रखने लगे हैं। हां, कुछ बहनें बड़ी दयालु हैं। वे कभी-कभी उन्हें खुला छोड़ देती हैं, इधर-उधर कूड़ा-कर्कट भी फेंक देती हैं, जिससे हमारी गुजर-बसर होती रहती है, नहीं तो जिन्दगी अब बड़ी भारी हो गई है।"

मुर्गे की आंखों में नींद आने लगी थी। वह बोला, "अब मैं सो जाना चाहता हूँ, नहीं तो सुबह जल्दी उठना मुश्किल हो जायगा। तुम तो जानती ही हो कि यह सूरज कितना आलसी है! मेरी 'कुकड़ू-कूं' से ही वह जाग पाता है, नहीं तो सोता ही रह जाय।"

उस समय चांद पूरब की ओर से निकलकर ऊपर की ओर आने लगा था। मक्खी और मुर्गे की बातचीत सुनकर उसे बड़ी हंसी आई। वह मन-ही-मन कहने लगा, "लेकिन मैं तो बिना किसी के जगाए ही उठ जाता हूं।"

उसी दिन वह ग्रहण में फंसनेवाला था, लेकिन इस बात का उसे उस घड़ी तनिक भी पता न था।

हीरे की लौंग

एक था चिड़ा, एक थी चिड़ी। दोनों ने मिलकर एक ब्राह्मण के घर के छप्पर में अच्छी-सी जगह ढूंढ़कर अपना घोंसला बनाया और आनन्द से रहने लगे। चिड़ी ने कुछ अंडे दिये।

"बात सुनो।" चिड़े ने एक दिन चिड़ी को पुकारा।

चिड़ी आई।

"हमारे इस घर के मालिक रामशास्त्री से उनकी पत्नी हमेशा क्यों झगड़ती रहती है? इसका कारण तो मालूम करो।" चिड़े ने कहा।

"हमें क्या पड़ी है ? हमारे पास अपना काम ही बहुत है। दूसरों के कामों में हम क्यों दखल दें ?" चिड़ी ने जवाब दिया।

लेकिन चिड़े को इससे तसल्ली न हुई। उसने फिर कहा, "तुम्हें अपने काम से मतलब रहता है, यह मैं खूब जानता हूं। लेकिन क्या हमें इस भोले ब्राह्मण की मदद नहीं करनी चाहिए ?"

चिड़ी ने हंसकर कहा, "जी हां, कर चुके आप मदद ! मैं कहती हूं, ये बेकार की बातें छोड़ो। और हां, देखना, कोई बिल्ला-बिल्ली घोंसले के पास न चला आवे !"

कुछ समय बाद चिड़े को कहीं से कूड़े में नाक में पहनने की हीरे की एक छोटी-सी लौंग मिली। उसे चोंच में दबाकर वह चिड़ी के पास पहुंचा और बोला, "देखो तुम्हारे लिए क्या लाया हूं ! पहनोगी ?"

चिड़ी ने कहा, "मुझे गहनों का चाव नहीं, कहीं से कुछ कीड़े मिलें तो ले आओ। बच्चे भूख के मारे बिलख रहे हैं।"

चिड़े ने हीरे की लौंग को वहीं नीचे गिरा दिया और कीड़े की तलाश में निकल पड़ा।

रामशास्त्री की पत्नी जब घर में झाड़ू दे रही थी, तो उसने देखा कि एक चमकती हुई लौंग नीचे पड़ी है। उसने उसे उठाकर अपने पास रख लिया। शास्त्रीजी ने जब अपनी स्त्री के पास हीरे की लौंग देखी तो वह अचरज में पड़ गये। उन्होंने क्रोध में आकर अपनी पत्नी से पूछा, "यह तुम्हें किसने दी है ? बोलो ?"

स्त्री ने जवाब दिया, "कल झाड़ू देते समय मुझे यह फर्श पर पड़ी मिली थी। तुम यह सब क्या कह रहे हो?"

यह सुनकर राम शास्त्री बोले, "तो पहला काम हम यह करें कि इसे गांव के पटवारी को सौंप दें। अगर कल कहीं पुलिस घर में तलाशी लेने आ पहुंची तो मैं कहीं भी मुंह दिखाने लायक न रहूंगा।"

पत्नी हठीली थी। बोली, "जो चीज मुझे मिली है, वह मेरी है। मैं उसे क्यों दूं?"

... ...

इसी समय एक दूसरे घर में दो मां-बेटियां इस तरह बातचीत कर रही थीं :

"नहाते समय मैंने उसे उतार कर रख दिया था। हमारी नौकरानी तो, मां, तुम जानती हो, बुद्धू है। उसने कचरा निकालते समय उसे भी कहीं फेंक दिया होगा।" लक्ष्मी ने अपनी मां से कहा।

"पहले अच्छी तरह सब जगह ढूंढ़ लो। पिताजी से अभी मत कहना कि लौंग खो गई है, नहीं तो वह बहुत नाराज होंगे।" पार्वतीदेवी ने अपनी लड़की को समझाया।

धीरे-धीरे बात सारे गांव में फैल गई। सबका कहना था कि चोरी नौकरानी ने की है। पुलिस ने उसके घर में तलाशी ली। लौंग नहीं मिली। राम शास्त्री की पत्नी को तो डर के मारे तेज बुखार चढ़ आया। शास्त्रीजी का दिल धड़कने लगा। लेकिन खैर हुई कि उनके घर में न कोई पूछने आया, न तलाशी हुई।

... ...

"देखा तमाशा !" चिड़े ने हँसकर चिड़ी से कहा।

"तुम्हें तो बस मजाक सूझ रहा है। बेचारी ब्राह्मणी तो तभी से बुखार में पड़ी है। मुझे तो डर लग रहा है कि कहीं मर न जाय।" चिड़ी ने उत्तर दिया।

"यह सब तुम्हारे ही कारण हुआ है।" चिड़े ने ताना देते हुए कहा।

"मैं क्या करती ? मैंने ब्राह्मणी से यह थोड़े ही कहा था कि लौंग उठाकर अपने पास रख लेना।"

"पति की बात न मानने से ही यह सब हुआ।" चिड़े ने अभिमान से अपना सिर ऊंचा करते हुए कहा।

"अच्छी बात है, मैं अब तुम्हारा कहना हमेशा माना करूंगी।"

चिड़ी बोली, "चलो, अब दोनों जने बाहर निकल पड़ें। कीड़े ढूंढ़कर लावें।"

दोनों चोंच उठाये, पर फैलाये, फर-फर बाहर की ओर उड़ चले।
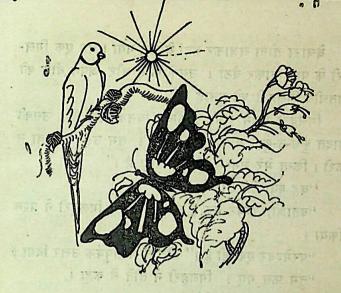
शुक - संदेह

"परमात्मा सर्वव्यापी है। लेकिन कुछ लोग उसे विभिन्न मूर्तियों और शिव-लिंगों में बन्द करके रखना चाहते हैं। नाना-रूपी मूर्तियां बनाकर वे उनकी पूजा करते हैं और अपने को शैव, वैष्णव आदि भिन्न-भिन्न मतावलम्बी बतलाते हैं !" एक कौवे ने अपने पास बैठे तोते से इस प्रकार अपना मत प्रकट किया। कौआ मन्दिर के परकोटे पर बैठा हुआ था।

तोते ने कौवे की बात सुनी और कहा, "यदि भगवान् सर्वव्यापी है तो मूर्तियों में भी होगा ही।"

"सुनी हुई बात को रटना शुरू कर दिया न !" कौवे ने तोते को चिढ़ाया।

बेचारा तोता लजाकर वहां से उड़ गया। वह एक गिलहरी के पास जाकर बैठा। उसने कौवे और अपने बीच की बातचीत गिलहरी को सुनाई।

गिलहरी कहने लगी, "कौवा वितंडावादी है। उसकी आदत कुछ-न-कुछ बकते रहने की है। तुम उसकी परवा न करो। किन्तु मेरे मन में भी एक संदेह है।"

"वह क्या ?" तोते ने पूछा।

"बताओ, ईश्वर एक है या अनेक ?" गिलहरी ने प्रश्न किया।

"परमेश्वर एक ही है।" तोते ने श्रद्धापूर्वक उत्तर दिया।

"तुम फंस गए।" गिलहरी ने तोते से कहा।

"क्यों ? कैसे ?" तोते ने घबराकर पूछा।

"देखो, वह बिल्ली मौसी आ रही है। उससे पूछो।" गिलहरी बोली।

तोते ने कहा, "नहीं, बिल्ली से मुझे बहुत डर लगता है।"

"डर और ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा दोनों एक साथ नहीं चल सकते। हिम्मत दिखाओ और बिल्ली से अपने मन का संदेह कहो।" गिलहरी बोली।

"सुनो, बहन गिलहरी ! मैं बिल्ली के पास कभी नहीं जाऊंगा। अगर गया तो संदेह के साथ-साथ मैं स्वयं भी मिट जाऊंगा। तुम खुद मुझको समझा सकती हो। गिलहरियों का प्रताप मैंने सुन रखा है। सुना है कि रामचन्द्रजी ने एक गिलहरी की मदद से ही सेतु-बांध बांधा था।" तोता बोला।

अपनी जाति की प्रशंसा सुनकर गिलहरी बहुत खुश हुई

और कहने लगी, "देखो, मूर्तिपूजा में यही दोष है। जितने मन्दिर हों, जितनी मूर्तियां हों, उतने ही ईश्वर होंगे। तुम्हीं ने स्वयं कहा कि भगवान् एक है। फिर भगवान् अलग-अलग नहीं हो जायंगे ? यह एक मामूली हिसाब है। तुम्हारी समझ में यह कैसे नहीं आया ?" गिलहरी ने किंचित परिहास के साथ तोते को समझाया।

"मैं ठहरा एक तोता। मैं किसी पाठशाला में तो गया नहीं। मैं गणित क्या जानूं ?" तोते ने विनयपूर्वक उत्तर दिया और वहां से उड़ गया।

उड़कर वह पास के एक मैदान में जा बैठा। वहां एक तितली बैठी थी। तोते ने तितली से पूछा, "प्यारी तितली, रंग-बिरंगी तितली, मेरे मन में कुछ संदेह पैदा हुआ है। उसका समाधान करोगी ?"

"हां, अवश्य !" तितली ने आत्म-विश्वासपूर्वक कहा।

तोते ने प्रश्न किया, "एक ईश्वर कैसे विभिन्न मन्दिरों में, विभिन्न आकारों में, एक साथ रह सकता है ? भला कभी एक फल एक साथ, अनेक और कई प्रकार के फलों में परिणत हो सकता है ?"

तितली हँसकर बोली, "तोते हो न ! इसीलिए तुम्हें फल के सिवा और कुछ नहीं सूझता !"

"हँसो मत, तितली ! सचमुच मेरे मन की शंका मुझे बुरी तरह से परेशान कर रही है। मेरी मदद करो। तुम बड़ी समझदार हो।" तोते ने आग्रह और आतुरता दिखाई।

"तोते, ऊपर देखो, तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है ?" तितली

ने पूछा ।

"सूरज अपने सम्पूर्ण तेज के साथ चमक रहा है ।" तोते ने कहा ।

"अब नीचे देखो। तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है ?" तितली तोते से इस प्रकार पूछ रही थी जैसे कि वह किसी पाठशाला की अध्यापिका हो । तोते का विनम्र बर्ताव भी ऐसा था जैसे कि वह एक छात्र हो । उसने नीचे की ओर देखकर कहा, "सूर्य का प्रकाश पत्तों के भीतर से जमीन पर छोटे-छोटे गोल-गोल चक्रों के रूप में दिखाई दे रहा है ।"

"अच्छा, धूप के गोल-गोल आकार कहां से आए ?"

"सूर्य से ।" तोते ने उत्तर दिया ।

"देखो, मैं इन धूप-बिंदियों को गिनती हूं ।" तितली गिनने लगी। वह एक बिंदी पर बैठती, फिर दूसरी पर, फिर तीसरी पर और साथ-साथ गिनती भी जाती थी। उसने एकसौ आठ तक गिनती गिनी ।

"अब समझा, एक ही सूर्य पत्तों के भीतर से एकसौ आठ बन गया ।" तोते ने खुशी के साथ कहा ।

तितली बोली, "एकसौ आठ क्या, एक हजार आठ और उससे भी अधिक, पेड़ में जितने पत्ते हों, उतने रूप ले सकता है । कितने भी मन्दिर हों, कितने भी उपासक हों, भगवान् अपने को उतने ही बना लेता है ।" यह कहकर तितली वहां से उड़ गई। तोता तितली की बुद्धि पर बहुत विस्मित हुआ। सोचने लगा कि यह कभी किसी को दुःख नहीं पहुंचाती । फूलों से धीरे से शहद चूसकर हट जाती है । तभी तो इसकी

ऐसी कुशाग्र बुद्धि है !

"मैं ही तो वह शहद हूँ, जिसे फल के भीतर से तितली चूसती है। वह मुझे ही पीती रहती है। इसीलिए इसमें तत्व-ज्ञान हो तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ! मैं हूं तो एक ही। किन्तु भक्तों के लिए अनेक और अनंत बन जाता हूं।" भगवान् कृष्ण ने भक्त शुक के कान में धीरे से कहा। तोते का संदेह मिट गया।

मूक प्राणी

एक आदमी को अपने देश का राजा पसंद नहीं आया। इसलिए वह जंगल में जाकर तप करने लगा। वह भगवान् से सदा यही प्रार्थना करता रहता कि उसके देश का दुष्ट राजा हट जाय और एक नेक राजा उसकी गद्दी पर बैठे।

वहां पर एक दूसरा आदमी भी आ पहुंचा। वह बहुत ही गरीब था। वह भी ईश्वर का ध्यान करने लगा। उसने मांग की, "हे प्रभो, मैं जिसे मित्र समझता रहा, वह तो बड़ा धोखेबाज निकला। मुझे एक ऐसा मित्र दो, जो कभी धोखा न दे।"

तभी किसी रईस का नौकर भी वहां आ पहुंचा। उसका मालिक उसके किसी काम से संतुष्ट न होता था। वह भी तंग आकर वहां प्रभु का ध्यान करने लगा।

एक चौथा आदमी, जिसका बाप ही उसका दुश्मन बन गया था, घर से भागकर उस जंगल में पहुंचा और तप करने लगा।

एक पांचवां आदमी भी वहां आ जुटा। वह अपनी मां से ही रूठ गया था।

छठे आदमी को दुनिया से, ईश्वर से या संसार की हरेक चीज से नाराजी थी। इसीलिए वह घर-बार छोड़कर जंगल में पहुंचा था। वह वहां पहुंच तो गया, लेकिन उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे! वह भी एक जगह बावला-सा तपस्वियों की तरह ध्यान लगाकर बैठ गया।

जब ये छः जने इस तरह ध्यान में लीन होकर बैठे थे, एक भील आया। उसके साथ उसका शिकारी कुत्ता भी था। इन योगियों को देखकर वह कुत्ता जोर से हँस पड़ा और बोला, "अरे मूर्खों, तुम लोगों को यह हो क्या गया है? अगर तुम लोगों ने मेरी तरह कुत्ते का जन्म लिया होता तो तुम्हारी यह हालत कभी न होती। सब-के-सब खुश रहते।"

"सो कैसे?" उस आदमी ने पूछा, जिसे भगवान् भी प्यारा न था।

औरों ने भी कुत्ते से यही सवाल किया। सब-के-सब कुत्ते को घेरकर बैठ गये।

"देखो," कुत्ता बोला, "यह खड़ा है मेरा मालिक। यही

मेरे लिए माता, पिता, भाई, बंधु, राजा, सब-कुछ है। मेरे लिए यही भगवान् है। मुझे किसी चीज की शिकायत नहीं। मैं तो कहता हूं कि तुम सब लोग भी कुत्तों का जन्म ले लो और अपने लिए एक स्वामी ढूंढ़ लो। फिर तुम्हारे जीवन में भी कोई असन्तोष नहीं रहेगा। भक्ति में ही सुख है। बुद्धि से कुछ नहीं बनता। भक्ति ही सबसे अच्छी है।"

असल में भील के रूप में भगवान् महादेव ही उनके सामने आये थे। वह एक तुच्छ कुत्ते के द्वारा उन लोगों को समझाना चाहते थे।

... ...

पाठकों में से भी कई अपने घरों पर कुत्ते पालते होंगे। उन मूक प्राणियों को जरा ध्यान से देखने पर एक बात समझ में आयगी। कुत्तों की आंखों के भीतर एक बहुत ही भला और भोला शिशु नजर आयगा।

कुत्ता बड़ा ही नेक जानवर है। उस पर हम पूरा भरोसा कर सकते हैं। जरूरत पड़ने पर वह हमारे लिए अपने प्राण तक खुशी के साथ दे देता है।

... ...

अंग्रेज लोग अपने कुत्तों को बड़ी अच्छी तरह से रखते हैं। हमें उनसे यह कला सीखनी चाहिए। उन लोगों में कुत्तों के बारे में कई कहानियां प्रचलित हैं। हमारे यहां ऐसी कहानियों की कमी है।

हां, एक कहानी अवश्य है। युधिष्ठिर पांचों पांडवों में सबसे बड़े थे। जीवन की अन्तिम बेला में वह अपने चारों भाइयों

के साथ सदेह स्वर्ग की ओर चढ़ने लगे। उनकी राह में कई दुर्गम पहाड़ पड़े।

चढ़ते-चढ़ते उनके चारों छोटे भाई और उनकी पत्नी द्रौपदी अपनी शारीरिक शक्ति खो बैठे और गिर-गिरकर प्राण छोड़ते गए। उनकी आत्माएं स्वर्ग पहुंच गईं, किन्तु एक कुत्ता उनके साथ आखिर तक रहा।

युधिष्ठिर सदेह स्वर्ग पहुंचे। स्वर्ग के द्वार पर उनकी अगवानी करने के लिए इन्द्रदेव स्वयं रथ लेकर उपस्थित थे।

युधिष्ठिर ने इन्द्र से कहा कि वह कुत्ते को भी अन्दर आने की अनुमति दें। इसे छोड़कर स्वर्ग में वह अकेले प्रवेश नहीं करेंगे।

इन्द्रदेव युधिष्ठिर की भावना को देखकर चकित हो गए। उन्होंने उनकी बड़ी प्रशंसा की। तब युधिष्ठिर को पता चला कि स्वयं धर्मराज ने उनकी परीक्षा लेने के लिए कुत्ता बनकर उनके साथ यात्रा की है।

यह कथा पृथक् से कुत्ते के बारे में नहीं है। असल में यह युधिष्ठिर के स्वर्गारोहण की कहानी है। किन्तु यह ध्यान में लाने योग्य बात है कि हमारे पुराणों में इस तरह कुत्ते को धर्मराज के रूप में चित्रित किया गया है।

गाय की हम सब पूजा करते हैं, क्योंकि वह हमें दूध देती है, लेकिन कुत्ता भी भक्ति-रूपी दूध की वर्षा करके हम पर कम उपकार नहीं करता।

मेंढक की कहानी

एक था मेंढक। एक रोज वह खेत की मेंड़ पर अपने विचारों में मस्त बैठा हुआ था। आगे-पीछे क्या हो रहा है, इसका उसे बिलकुल पता न था। तभी एक सांप चुपके-से आया और उसने मेंढक को निगल लिया।

मरने के बाद मेंढक स्वर्गलोक पहुंचा, ब्रह्मदेव के पास। चूंकि मेंढक ने कोई बुरा काम नहीं किया था, इसलिए ब्रह्मदेव उससे खुश थे। उन्होंने उसे प्यार से अपने पास बुलाकर कहा, "वत्स,

तुम्हारी जो भी इच्छा हो, बताओ। चाहो तो तुम्हें मनुष्य का जन्म दे दूं।"

लेकिन मेंढक ने प्रार्थना की, "भगवन्, मैं तो सांप बनना चाहता हूं।"

"ऐसा ही होगा !" ब्रह्मदेव बोले, "कुछ समय बाद जब कुछ अधिक अक़्लमंद बनो तब मेरे पास आना।"

मेंढक सदा सांप से डरता था। उसने सोचा कि वह स्वयं सांप बन जाय तो निडर होकर घूम सकेगा।

ब्रह्मा के वरदान से मेंढक सांप बन गया और उसी खेत में पहुंचा।

एक दिन एक किसान अपने लड़के के साथ गांव में से खेत की तरफ जा रहा था। लाठी लिये वह आगे-आगे था और उसका लड़का उसके पीछे। बाप ने एकाएक लड़के से रुक जाने को कहा, क्योंकि उसके सामने वही सांप पड़ा हुआ था। किसान ने सांप के सिर पर जोर से एक लाठी जमाई। सांप तड़पने लगा। जबतक वह मर नहीं गया, किसान उसे लाठी से कुचलता रहा।

जब सांप दुबारा ब्रह्मदेव के पास पहुंचा तब उसने प्रार्थना की, "देव, मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। मैं शाम की मंदी-मंदी धूप का सेवन कर रहा था कि एक क्रूर आदमी ने मुझे कुचल कर मार डाला।"

ब्रह्मा कहने लगे, "जब मेंढक थे तब तुमने सांप बनना चाहा था। बोलो, अब क्या चाहते हो ? तुम निर्दोष हो, इस लिए निःसंकोच बता सकते हो कि अगले जन्म में क्या बनना

पसन्द करते हो ?"

"मुझे एक डंडा बना दीजिये, भगवन् !" सांप ने वर मांगा, "मेरा लक्ष्य उस आदमी को उसी तरह मार डालने का है, जैसे कि उसने मुझे मारा है।" सांप ने कहा।

ब्रह्मा बोले, "अच्छी बात है, किन्तु शुरू में ही डंडा बन जाना संभव नहीं। पहले पेड़ का रूप धारण करोगे। बाद में डंडा बन सकोगे।"

"तब मुझे नीम बना दीजिए।" सांप ने कहा।

"ऐसा ही होगा। जो कभी किसी को दुःख नहीं पहुंचाता, तुम्हें वह नीम का वृक्ष बनाये देता हूं।"

विधाता ने सांप को नीम के पेड़ के रूप में बदल दिया।

छोटा-सा नीम बड़ा हुआ, फूला और फला। गांव की औरतें नीम की निम्बोलियों को तोड़-तोड़कर ढेर-की-ढेर इकट्ठा कर लेतीं, उनके बीजों को कूटकर तेली के पास दे आतीं और वह उनको घानी में डालकर, तेल निकालकर, उन्हें वापस कर देता।

अपनी सन्तानों अर्थात् निम्बोलियों को इस तरह यातना में पिसता देखकर नीम रोया करता, फिर उसको भूलकर नये फल और फूलों से लद जाता और अन्त में फिर वही तेल-घानी की क्रिया शुरू हो जाती।

इस प्रकार नीम ने कई वर्ष रो-रोकर बिता दिये। वह बूढ़ा भी हो गया। एक रोज किसान अपनी कुल्हाड़ी लेकर पेड़ के पास आया। उसने सोचा कि पेड़ की जगह यदि वह खेती करे तो ज्यादा फायदा हो। उसने कुल्हाड़ी से पेड़ को काट

गिराया। घर के लिए इंधन इकट्ठा कर लिया, कुछ लकड़ी घर की मरम्मत के काम में ले ली और एक मोटा-सा डंडा भी बना लिया।

किसान स्वभाव का क्रोधी और लड़ाकू था। हाथ में डंडा लेकर लोगों को डराने-धमकाने की उसे आदत पड़ गई। एक दिन किसी आदमी के साथ उसका झगड़ा हो गया और अपने डंडे से उस आदमी के सिर पर ऐसे जोर से वार किया कि बेचारे के काफी चोट आई।

घायल ने कचहरी में मुकदमा चलाया। किसान को सजा मिली, साथ ही जज ने हुक्म दिया कि वह डंडा, जो इस सारे झगड़े की जड़ था, जला दिया जाय।

अब की बार डंडे ने ब्रह्मदेव से प्रार्थना की, "देव, बहुत हुआ। मुझे पुनर्जन्म से ही मुक्ति दे दी जाय।"

नमक के लिए चाटती है

"भैया, तुम मेरा सारा दूध दुह लेते हो। मेरे बछड़े के लिए भी जरा-सा नहीं छोड़ते। फिर पानी मिलाकर उसे बेचते हो। लोग समझते हैं कि मेरा दूध ही पनियल है। अपने दूध की ऐसी निन्दा तो मुझसे नहीं सही जाती।" गाय ने ग्वाले से शिक़ायत की। उसका हृदय भर आया और ममता-वश वह अपने बच्चे को चाटने लगी।

ग्वाले की समझ में गाय की बात नहीं आई।

पास ही एक भैंस बंधी थी। वह गाय से कहने लगी, "दूध तो यह आदमी बूंद-बूंद निकल लेता है, खाने को भी तो भरपेट नहीं देता, बहन !"

आंखों के सामने थन-कढ़ा दूध ले जाने के लिए एक डाक्टर महोदय परिवार-सहित वहां आये हुए थे। वह ग्वाले से कहने लगे, "देखो भाई, पानी तो तुम मिलाते ही हो, लेकिन मेहरबानी करके कम-से-कम गन्दा पानी न मिला देना।"

"देखिए, डाक्टर साहब," ग्वाले ने आंखें तरेरते हुए कहा, "मुझसे ऐसी बातें न कीजिये। मैं कहीं दूध में पानी मिलाता हूं !" उसने अपनी दूध निकालने वाली हांडी उलटकर दिखाते हुए कहा। ग्वाले ने जोर-से हांडी को बजाया और डाक्टर साहब से पूछा, "सुनिये, आवाज खाली बर्तन की है न ?" और जल्दी-जल्दी दूध दुहने लगा।

डाक्टर का कम्पाउंडर भी खड़ा था। उसने बताया कि आजकल ग्वाले गायों को खूब नमक खिलाते हैं। इससे गाय का दूध पतला होकर अधिक मात्रा में निकलता है।

ग्वाला बोला, "अगर दूध के दाम ठीक मिलते रहें तो मिलावट क्यों हो ?"

इस पर डाक्टर की बीवी ने कहा, "अब कौन कम दाम ले रहे हो ? कितना भी दाम दो, तुम लोगों की आदत ही दूध में पानी मिलाने की हो गई है। दाम बढ़ा भी दिये जायं, फिर भी तुम वह कुटेव छोड़नेवाले थोड़े ही हो !"

ग्वाला भी एक ही छंटा हुआ था। उसने हेकड़ी से उत्तर दिया, "आपको पता है, आजकल चारे का क्या भाव है ?

आपको अपना वेतन बढ़ा हुआ नहीं मालूम पड़ता। सिर्फ हमारे दूध का भाव ही बढ़ा दिखाई देता है। बहूजी, महंगाई सभी तरफ बढ़ रही है।"

गाय का बछड़ा ये सब बातें सुन रहा था। लेकिन उस बेचारे की समझ में कुछ नहीं आया कि दूध किसे कहते हैं और उसमें पानी क्यों मिलाया जाता है। वह अपनी मां से पूछने लगा, "ये लोग क्या कह रहे हैं, मां? दूध क्या चीज होती है?"

बेचारी गाय क्या उत्तर देती! उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह निकली।

उधर डाक्टर के छोटे लड़के ने अपने पिता से पूछा, "पिताजी, गाय बछड़े को क्यों चाटती है?"

डाक्टर ने इस प्रकार का साहित्य वहुत पढ़ा था। कहने लगे, "बेटा, गाय को नमक की जरूरत होती है। बछड़े को चाटने से वह उसे प्राप्त हो जाता है।"

डाक्टर ने पढ़-पढ़कर अपना हृदय पत्थर की तरह कठोर बना लिया था।

तितली और कीड़ा

वसंत ऋतु थी। बाग में एक तितली घूम रही थी। वह एक पौधे से उड़कर दूसरे पर जाकर फूलों के मधुर रस का बड़े आनन्द से पान कर रही थी। एक पत्ते पर उसने एक छोटे-से कीड़े को बैठे हुए देखा। तितली को अपने रंग-रूप पर बड़ा अभिमान था। कीड़े को देखकर उसे हँसी आ गई। झट बोल उठी, "तुम भी कैसे जीव हो !"

"क्यों, मैं तो ठीक हूं।" कीड़े ने जवाब दिया।

"देखो तो सही, मेरे कैसे सुन्दर पंख हैं ! मैं किस फुर्ती के साथ उड़ती हूं ! तुम तो पत्ते के साथ चिपके हुए आहिस्ते-आहिस्ते पेट के बल रेंगते फिरते हो ! अपने इस तुच्छ जीवन पर मालूम होता है, तुम बहुत खुश हो ! तुम्हारे जैसा मूर्ख

मैंने कहीं नहीं देखा ।" तितली बोली ।

पेड़ के ऊपर एक चिड़िया बैठी हुई तितली की बात सुन रही थी। वह बोली, "बहन, तुम भी कुछ समय पहले ऐसी ही थीं । भूल गईं क्या ?"

"मैं ! मैं कीड़ा कब थी ? मैं तो हमेशा ऐसी ही सुन्दर थी और ऐसी ही रहूंगी ।" तितली ने चिड़िया को बड़े दर्प से उत्तर दिया और वहां से उड़कर अपने प्रियतम के पास पहुंच गई ।

कुछ दिनों बाद तितली ने एक अच्छी-सी जगह ढूंढ़कर कुछ अंडे दिये। वह बड़ी आतुरता के साथ यह राह देख रही थी कि अंडे में से कब बच्चे निकलें । लेकिन आश्चर्य ! सभी अंडों में से छोटे-छोटे कीड़े ही निकले । तितली उन्हें देखकर रो पड़ी और अपने प्रियतम से कहने लगी, "यह क्या हो गया ? मेरे बच्चे मेरे-जैसे नहीं हुए, ये कीड़े-जैसे बन गये !"

"तुमने एक रोज एक कीड़े का अपमान किया था । याद है न ? शायद उसी ने तुम्हें शाप दे दिया हो !" उसने जवाब दिया ।

"वह कीड़ा बड़ा सीधा-सादा था । उसने कभी शाप नहीं दिया होगा ।" तितली ने कहा ।

कुछ समय निकल गया । तितली फिर बोली, "पता नहीं क्यों, कीड़े होने पर भी ये बच्चे मुझे बड़े प्यारे लगते हैं ।"

"हां, मुझे भी ये बहुत प्यारे हैं ।"

कुछ दिनों बाद उन छोटे-छोटे कीड़ों के रंग-बिरंगे पर उग आये और वे उड़ने लगे । तितली को बड़ा आश्चर्य हुआ ।

उसने अपने बच्चों से पूछा, "बच्चो, अभी कुछ ही दिन पहले तुम लोग छोटे-छोटे कीड़े थे। याद है ?"

छोटी-छोटी तितलियों की समझ में मां की बात जरा भी नहीं आई। उन्होंने उसकी ओर ध्यान भी नहीं दिया। वे फुर्ती के साथ उड़े और फूलों पर रस लेने लगे।

बूढ़ी तितली को बहुत बुरा लगा। अपने पति को बुलाकर उसने कहा, "देखा अपने बच्चों को ? यह दुनिया भी कैसी है ? बच्चे मां-बाप की जरा भी परवा नहीं करते।"

"बिलकुल ठीक कहती हो तुम। लेकिन इस समय मुझे बड़ी नींद आ रही है। चलो, सो जायं। सब ठीक ही है।" पति बोला।

दोनों, जहां बैठे बात कर रहे थे, वहीं आराम से सोने लगे और धीरे-धीरे चिरनिद्रा में लीन हो गये।

... ...

मामूली लोग जैसे नाटक में राजा और रानी की पोशाक पहनकर अभिनय करते हैं, वैसे ही छोटे-छोटे कीड़े चमकीली रंगीली तितलियां बन जाते हैं। वे कुछ दिन खूब मौज उड़ाते हैं, फिर एकदम गहरी और आनन्दमय निद्रा में डूब जाते हैं, ऐसे कि फिर कभी नहीं जागते। उनका जीवन पाप-रहित होता है। वे सीधे परमात्मा के पास पहुंच जाते हैं।

इसी प्रकार सौभाग्य से कुछ लोग अमीर बन जाते हैं। उनमें से कुछ अपना पहलेवाला जीवन भूलकर बड़े घमंड का बर्ताव करने लगते हैं। उन्हें तितली की उपमा दी जाती है। लेकिन ये लोग तितलियों-जैसे निर्दोष जीव नहीं होते। न ये

तितलियों की तरह अपने प्रारम्भिक जीवन से अनभिज्ञ ही होते हैं। सब-कुछ याद होने पर भी वे घमंड नहीं छोड़ते। तितली की तरह आनन्दमय अन्तिम निद्रा भी इनके भाग्य में नहीं बदी होती। कैसी दशा है इनकी !

चलो, शहर चलें

"मैं इस शहर की गली-गली से परिचित हूं। कहां खाने की क्या चीज बिकती है, कौन-सी घटिया है और कौन-सी बढ़िया है—यह मैं खूब जानता हूं। लेकिन सुब्बम्मा की मिठाइयों की जो सब जगह नामवरी हो रही है, उसको मैंने कभी नहीं चखा। वह औरत मेरा दांव ही नहीं चलने देती।" नर-मक्खी मादा-मक्खी से कह रही थी।

"तुम बिलकुल ठीक कहते हो। मैंने भी कई बार प्रयत्न

किया, वह हमेशा अपनी मिठाइयों को ढंककर रखती है। पास पहुंचते ही हाथ के पंखे से दूर हटा देती है।" मादा-मक्खी बोली।

सुब्बम्मा एक गरीब विधवा थी। पति जीवित था तो कुछ मामूली व्यापार कर लेता था, किन्तु जब कुछ काम चलने लगा तो उसकी मृत्यु हो गई। किसी तरह कठिनाइयां झेलकर सुब्ब-म्मा अपना और अपने लड़के का पेट पालती थी। एक रुपया खर्च करके नारियल और गुड़ लाती थी। उनकी बर्फियां बना डालती थी। लड़का उन्हें बाहर बेच आता था। वह एक थाली में एकसौ अठासी बर्फियां सजाकर रख देती थी। वे सब दो रुपयों में बिक जाती थीं। एक रुपये का मुनाफा हो जाता था। मां-बेटा उससे गुजारा कर लेते थे।

उसे देखकर एक और आदमी ने भी मिठाई बेचना शुरू कर दिया। लेकिन गांववाले सुब्बम्मा की मिठाइयां पसन्द करते थे, क्योंकि सब जानते थे कि उसे सफाई का काफी खयाल है। बच्चे उसकी मिठाइयां इसलिए पसंद करते थे कि उसकी बर्फियां कुछ बड़ी और नरम होती थीं।

कुछ दिन बाद गांव में विलायती ढंग की मिठाइयों की एक दूकान खुली। ये मिठाइयां डिब्बों में, छोटी-छोटी शीशियों में, बिकती थीं। दाम भी इनके अधिक नहीं थे। कहीं बाहर से ये मिठाइयां आती थीं। दूकानदार चतुर था। हँस-हँसकर ग्राहकों से बात करता था।

सुब्बम्मा की मिठाइयों की बिक्री अब कम हो गई। छः महीने तक उसने किसी प्रकार चलाया। फिर उसका धंधा एक-दम बंद हो गया।

बेचारी सुब्बम्मा बेचैन हुई। लड़के को उसी नई दूकान में नौकर रखवाया। दूकानदार बार-बार उसे डांटा-डपटा करता था। डर के मारे लड़के का सुन्दर चेहरा अब विचित्र दिखाई देने लगा।

"क्यों, तुम तो मुझे अपने पास बिलकुल ही नहीं आने देते थे। कहां गई तुम्हारी वह शान!" यह कहती हुई नर-मक्खी लड़के के कान में घुसने लगी। बेचारे लड़के को उसे हटाने की भी हिम्मत न हुई। वह मालिक की तरफ ताकता रहा, क्योंकि जरा-सी भी गफलत हो जाने पर मालिक लड़के पर बुरी तरह बिगड़ उठता था और कभी-कभी तो उसके तमाचे भी जड़ दिया करता था।

"बेचारा बहुत दुबला हो गया है।" कहती हुई नर-मक्खी मिठाइयों के एक खुले तसले पर आ बैठी।

मादा-मक्खी को अब मिठाइयों में स्वाद नहीं आता था, वह कूड़े के डिब्बे में गंदगी पर बैठी थी। पति की आवाज कान में पहुंची तो दूकान में घुसकर नर-मक्खी से पूछने लगी, "क्या कह रहे थे ?"

कुछ नहीं, जरा इस लड़के को तो देखो ! बेचारे का क्या हाल हो गया है !"

मादा-मक्खी ने उत्तर दिया, "ठीक कहते हो, मगर हम क्या कर सकते हैं ?"

"इन विलायती मिठाइयों से लोगों का सत्यानाश हो गया।" नर-मक्खी कहने लगी।

"होगा, चलो, वह देखो, वहां लोग कचरा इकट्ठा कर रहे

हैं। चलो, वहीं चलें।" मादा-मक्खी ने कहा।

और वे दोनों मिठाइयों को खुली छोड़कर कचरे की तरफ चल दिये।

... ...

सुब्बम्मा का भाई मद्रास में एक छोटी-सी नौकरी पर लगा हुआ था। वह गांव आकर कुछ दिनों के लिए अपने भानजे को मद्रास लिवा ले गया। लड़के ने जाने से पहले अपने मालिक से छुट्टी मांगी। मालिक ने उसे छुट्टी तो दे दी, लेकिन कहा कि जितने दिन गैरहाजिर रहोगे, उतने दिन के पैसे काट लिये जायंगे।

मद्रास से लौटकर लड़के ने बताया, "मां, मामाजी मुझे एक दिन एक होटल में ले गये थे। वहां लोग सफाई का ध्यान ही नहीं करते। सब लोग प्यालों को मुंह में लगाकर पीते हैं और फिर इन प्यालों को एक बाल्टी के पानी में योंही डालकर निकाल लेते हैं।"

सुब्बम्मा को यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसने शहरी आदतें न कभी देखी थीं, न सुनी थीं।

लड़के ने आगे बताया, "वहां सभी जाति के लोग बीड़ी पीते हैं, मां! हाथ-पैर धोये बिना ही खाने की वस्तुओं को छू लेते हैं।"

मां ने कहा, "बस करो, बेटा। मुझे इन बातों का सुनना भी अच्छा नहीं लगता। अब तुम कभी शहर न जाना।"

लेकिन लड़का कहता ही गया, "मामाजी भी तो चुरुट पीते है, मां!"

सुब्बम्मा ने कानों पर हाथ रखकर कहा, "राम, राम!"

... ...

नर-मक्खी ने अपनी पत्नी से कहा, "मां-बेटे की बातचीत सुनी ? चलो, हम भी शहर चलें। लड़के के नगर की बड़ाई करने से मुझे लगता है कि हमारे रहने योग्य स्थान शहर ही है।"

"हां-हां, चलो, किसी गठरी के ऊपर चिपककर आराम से बैठ जायंगे। हम से कोई टिकट भी न मांगेगा।"

स्वामीजी हार गये

"ऐ चीते, ऐ शेर! तुम बहुत बुरे हो। रोज बेकसूर हिरन और गायों को मारना और खा जाना यही तुम लोगों का धंधा है। इस पाप-कर्म को क्यों नहीं छोड़ देते? हम आदमियों को देखो। हमारा कैसा ऊंचा जीवन है! तुम लोग भी हमारी तरह रहने की कोशिश करो।" एक स्वामीजी, जो जंगल में रहने गये थे, वहां के जानवरों को इस तरह उपदेश देने लगे।

स्वामीजी के वचन सुनकर सियार ने शेर से कहा, "मैं तो इस स्वामी से तंग आ गया हूं। मेरी राय में तो आप इसी का शिकार करके रोज-रोज का यह किस्सा खत्म कर दें।"

"इसके खाने से क्या पेट भरेगा ! उल्टे लम्बे-लम्बे जटा-जूट पेट में और उलझ जायंगे। इसे तो बातचीत करके ही चुप करना ठीक होगा।" शेर ने सियार को समझाया।

चीता भी साथ हो लिया। उसने स्वामीजी से पूछा, "महाराज, आदमियों में भी तो कई लोग मुर्गा, बकरा मारकर खाते हैं, फिर आप हमारी ही निन्दा क्यों करते हैं ?"

"तुमने ठीक पूछा।" शेर ने चीते को बढ़ावा दिया।

"बच्चो, सुनो," स्वामीजी कहने लगे, "मैं समझता हूं, परन्तु आदमियों के और तुम लोगों के मांस खाने में अन्तर है। आदमी तुम्हारी तरह कच्चा मांस नहीं खाते, बल्कि उसे पकाकर खाते हैं। तुम्हारा ढंग जंगली है।"

"आपकी दलील कमजोर है।" शेर ने कहा।

"वह कैसे ?" स्वामी ने पूछा।

"भाई सियार, तुम्ही इन्हें समझाओ। शेर ने अपने मंत्री को हुक्म दिया।

"वाह स्वामीजी !" सियार कहने लगा, "यह छोटी-सी बात भी आपकी समझ में नहीं आई ! बड़े अजरज की बात है ! आप तो विद्वान हैं ! मैं तो जंगली जानवर हूं। बाघ और चीतों को ईश्वर ने कच्चा मांस हजम करने की ताकत दी है। आदमी को वह ताकत नहीं दी। मानते हैं न ? बताइये, हां कि नहीं ?" सियार ने पूछा।

"बिलकुल ठीक। इसीलिए तो आदमी जब कभी मांस खाते हैं, अच्छी तरह पकाकर खाते हैं।" स्वामीजी बोले।

"लेकिन स्वामीजी," सियार बोला, "आप लोग प्रकृति के खिलाफ काम करते हैं। ऐसा करना पाप है। भगवान ने आप लोगों के लिए जो खुराक तय की है, उसके अलावा और चीजें खाने की इच्छा आप लोग रखते हैं। आग और पानी की मदद से मांस आदि को मुलायम करके खाते रहते हैं। चीते और बाघ ऐसा पाप कभी नहीं करते। उनके लिए तो भगवान ने यही नियम बनाया है कि वे दूसरे जानवरों को मारकर अपना निर्वाह करें। वैसी पाचन-शक्ति भी उन्हें दी है।" सियार ने लम्बा व्याख्यान दे डाला।

स्वामीजी बोले, "तुम तो मरे हुए जानवरों को खाते हो, इसलिए बहुत ही छोटे प्राणी हो, किन्तु चतुराई से बात करना खूब जानते हो। सचमुच तुम्हारा जीवन बहुत ही गिरा हुआ है।"

"धन्य है, स्वामीजी ! बकरों को जिन्दा ही कत्ल करके आपकी जाति के लोग खा जाते हैं। लेकिन हम, जब जानवर मर जाते हैं और सड़ने लगते हैं, तब उन्हें खाते हैं। बताइये, पाप आप लोग करते हैं या हम ?" सियार ने पूछा।

स्वामीजी सिर खुजाने लगे। उनसे उत्तर न बन पड़ा।

"क्यों, किस विचार में पड़ गये, स्वामीजी ?" शेर ने पूछा, "देखिये, अब यहां अधिक ठहरना आपके लिए खतरे की बात है। इस चीते की भूख बढ़ रही है।"

शेर ने देखा कि चीते की जीभ से लार टपक रही थी।

स्वामीजी ने भी वहां से खिसकने में ही अपनी खैर समझी।

घीवाले स्वामीजी

लाला बनवारीलाल घी का धंधा किया करते थे। गांवों में घूम-फिरकर वह असली घी इकट्ठा करते और शहर में उसे अच्छे दामों पर बेच देते। इससे उन्हें काफी मुनाफा होता था। थोड़ा-थोड़ा करके उनके पास काफी पैसा इकट्ठा हो गया। धन बढ़ने के साथ उनमें और अधिक कमाने की इच्छा भी प्रबल होती गई। धीरे-धीरे वह शुद्ध घी में मिलावट करने लगे। मुनाफा और अधिक होने लगा।

उनके ग्राहकों को अब घी की सुगंधि और स्वाद में फर्क मालूम होने लगा, लेकिन बनवारीलाल उन्हें समझाते कि वह क्या करें, आजकल गाय-भैंस की खुराक में ही खराबी आ गई

हैं। इसीलिए घी-दूध में अब पहले-जैसा स्वाद नहीं रह गया।

उनकी देखादेखी दूसरे व्यापारी भी घी में मिलावट करने लगे।

कुछ दिन बाद उनके गांव में दूर दक्षिण से एक बाबाजी आये। वह लोगों को इकट्ठा करके अच्छी-अच्छी बातें बताते और बुरे कामों की निन्दा करते।

लाला बनवारीलाल का भगवान पर से भरोसा उठने लगा था। उन्होंने सोचा कि यदि सचमुच कोई भगवान होता तो अब-तक घी में मिलावट करनेवालों को अवश्य दंड मिल गया होता। वह कहने लगे कि ईश्वर की बात झूठ है।

बाबाजी ने बनवारीलाल को अच्छी-अच्छी किताबें पढ़ने को दीं। उनको प्यार से समझाया, "भैया, ऊपर देखो, चारों तरफ देखो, दुनिया को देखो। तुम्हें दुनिया के बनानेवाले भगवान क्यों नहीं दिखाई देते ? भगवान को न मानने की बात छोड़ दो।"

लाला बनवारीलाल ने बाबाजी की दी हुई सब किताबें पढ़ डालीं, किन्तु किताबों के पढ़ने-भर से कहीं ज्ञान मिल सकता है ! लाला के मन में पैसा कमाने की इच्छा के सिवा और कोई बात जमती ही न थी। उल्टे, भगवान नहीं हैं, इस पर श्रद्धा बढ़ती चली गई।

एक दिन बनवारीलाल के घर में चोर घुस आये और उनका सारा धन लूट ले गये। बनवारीलाल को किसी पर विश्वास नहीं था। बैंक में भी वह पैसा जमा नहीं करते थे। वह सोचते थे कि बैंक के लोग भी उन्हीं की तरह धोखेबाज होंगे।

रुपया-पैसा वह घर में ही रखा करते थे। धन लुट जाने पर वह बेचारे खूब रोये।

फिर से व्यापार शुरू करने के इरादे से जब उन्होंने लोगों से उधार मांगा तब किसी ने भी उन्हें पैसा देने की हिम्मत न की।

लाचार होकर बनवारीलाल किसी धनिक आदमी के यहां नौकरी करने लगे। वहां विनम्र आचरण जरूरी था। अब उनमें भगवान के होने पर कुछ श्रद्धा पैदा हुई और वह दिन-पर-दिन बढ़ती गई।

बाबाजी की दी हुई किताबों को लाला बनवारीलाल ने फिर पढ़ा। उनमें अब उनको सचाई दिखाई दी। पैसा चोरी हो जाने से उन्हें जो धक्का लगा था, वह कम हो गया। वह अब मन्दिर भी जाने लगे। उन्होंने प्रार्थना और मनन करने की आदत डाली। वह पक्के आस्तिक बन गये। उनका मालिक भी उनके पास आ बैठता और दोनों मिलकर धर्मचर्चा करते।

लोग लाला बनवारीलाल को अब 'घीवाले बाबा' कहकर पुकारने लगे। जब कोई उनसे यह पूछता कि आपका यह ईश्वर कैसा है कि चोरों से आपका सारा धन लुटवा दिया, तब वह नाराज हुए बिना उत्तर देते, "भगवान ने मुझे सीख देने के लिए ही यह कराया होगा। उसकी लीला को कौन समझ सकता है! धन के साथ मेरे मन का मैल भी तो दूर हो गया।"

राजा का भेस

एक बार गांव में लोगों ने एक स्वांग रचाया। स्वांग का प्रबन्ध करनेवालों ने स्वांग में भाग लेनेवालों को इनाम में रुपया-पैसा नहीं दिया, बल्कि स्वांग में जो भड़कीली पोशाक पहनने को दी गई थी, वही उनको भेंट कर दी।

राजा का भेस बुद्धूराम को मिला। इसलिए वह उसी भेस में खुश-खुश अपने घर गया। औरों ने अपने-अपने स्वांग के कपड़े तह करके सम्हालकर रख दिये, लेकिन बुद्धूराम ने वैसा

नहीं किया और राजा की पोशाक में वह अपने को राजा ही समझकर व्यवहार करने लगा।

"ये कपड़े उतार दीजिये।" बुद्धूराम की पत्नी ने कहा। वह बहुत अच्छी और समझदार औरत थी। पति की खूब सेवा किया करती थी और पति भी उसे दिल से चाहता था। किंतु उस रोज वह बहुत गुस्से में था। क्योंकि स्वांग में उसने बेहद गुस्सा दिखाया था। वह स्वांग में इतना तल्लीन हो गया था कि घर आकर भी अपने-आपको राजा ही समझ रहा था।

"ज्यादा मत बोलो!" उसने पत्नी को डांटकर कहा, "देखती नहीं, मैं राजा हूं।"

पत्नी चिन्ता में पड़ गई। उस पर यह डर सवार हुआ कि पतिदेव कहीं पागल तो नहीं हो गये। फिर भी उसने सोचा कि रात को अच्छी नींद लेने पर सुबह तक ठीक हो जायंगे।

लेकिन दूसरे दिन बुद्धूराम के व्यवहार में कोई अन्तर न पड़ा। उसने जोर से आवाज दी, "महामंत्री!"

उनके घर में कुत्ते का नाम भी 'मंत्री' था। वह अपने मालिक की आवाज सुनकर पूंछ हिलाता हुआ उसके पास दौड़ आया।

"चलो, शिकार खेलने चलें।" बुद्धूराम ने कहा।

पत्नी ने रोका, "कहीं बाहर मत जाओ।" उसे डर था कि कहीं गांववाले हँसी-ठट्ठा न करें।

"मेरी रानी, देखो, दुश्मन बिल्कुल पास आ गया है। लड़ाई में जाना बहुत जरूरी है। मुझे मत रोको," बुद्धूराम कहने लगा। स्वांग में उसने इसी प्रकार बातचीत की थी। ये

जुमले उसे अच्छी तरह याद हो गये थे।

पत्नी रो पड़ी। उसने देखा कि मामला बहुत बढ़ गया है। लेकिन बुद्धूराम कहते गये, "प्रिये, रोओ मत। मैं जय-माल पहने हुए लौटूंगा।"

इतना कहकर बुद्धूराम सड़क की ओर निकल पड़ा। कुत्ता भी खुश-खुश उसके पीछे-पीछे चल दिया।

रास्ते में बुद्धूराम को एक सियार मिला। वह सारी बातें समझ गया। उसने बुद्धूराम से कहा, "बुद्धू राजा, देशभर में राजाओं का खेल खत्म हुआ। सबने अपना-अपना भेस उतार दिया। उनका नाटक तो कभी से चल रहा था, आपका तो एक ही रात का खेल था। अब अपने महल की तरफ लौट पड़िये।"

सियार भला था। रोज उसे अखबार पढ़ने की आदत थी। जमींदारी और पांचसौ छब्बीस देसी राज्यों के खत्म होने की बात उसने पढ़ रखी थी।

बुद्धूराम ने अपने कुत्ते-मंत्री से पूछा, "क्या मैं सियार की बातों पर भरोसा कर सकता हूं? क्या इसका कहना सच है? तुम अपनी बोली में बोलो, मैं समझ जाऊंगा।"

कुत्ता बहुत खुश हुआ कि मालिक उसकी सलाह ले रहा है। धीरे से वह 'हां' के स्वर में गुर्राने लगा।

उसकी बात सुनकर बुद्धूराम लौट पड़े।

घर पहुंचकर उन्होंने पत्नी से कहा, "सुनोजी, सभी राजा लोग खत्म हो गये। मैं भी चुप रहूंगा।"

पत्नी बेफिक्र होकर घर के काम-काज में लग गई।

मुर्गी की चिन्ता
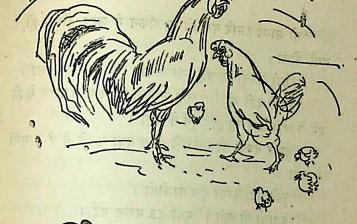
कुप्पुस्वामी एक किसान था। उस दिन तीन साल बाद, उसका दामाद लंका से घर लौटा था। वहां वह काम-काज की तलाश में गया हुआ था। कुप्पुस्वामी का सारा परिवार आज बहुत खुश था। दामाद सुब्बु भी परदेस से बच्चों के लिए बहुत-से खिलौने लाया था। बच्चे उनसे खेल रहे थे। घर में मेहमान के लिए दावत की तैयारी हो रही थी।

कुप्पुस्वामी के घर की मुर्गी ने मुर्गे से कहा, "नाथ, हमारे बच्चों में से एक कहीं खो रहा है। कल रात मैंने गिने थे, सब थे। आज सुबह देखती हूं तो एक कम है।"

"शायद चील ने उठा लिया हो," मुर्गे ने जवाब दिया।

"रात को चील नहीं आया करती। सुबह आई होती तो हमें जरूर पता चलता," मुर्गी ने कहा।

"तो शायद हमारे घर की मालकिन ने उठा लिया हो," मुर्गा बोला।

"हमारे बच्चों का वह क्या करेगी ?" मुर्गी ने पूछा।

"पगली कहीं की ! तू नहीं जानती कि कुछ मतलब से ही हमें ये लोग पाल रहे हैं," मुर्गे ने कहा।

"हमारे बच्चों को लेकर ये लोग क्या करते हैं ?" मुर्गी ने पूछा।

"पूछो मत, वरना दुख पाओगी।"

"बताओ तो सही।" मुर्गी हठ पकड़ गई।

"गला मरोड़ देते हैं। फिर पकाकर खा जाते हैं।"

यह सुनते ही मुर्गी चीख पड़ी और बेहोश होकर गिर पड़ी। होश में आने पर कहने लगी, "क्या ऐसा भी कहीं हो सकता है ?"

मुर्गे ने कहा, "इसमें क्या नई बात है ? क्या हम कीड़ों-मकोड़ों को पंजे से दबोचकर नहीं खाते ? मनुष्य कच्चा मांस नहीं खाते, इसलिए आग में पकाकर खाते हैं।"

"तुम कैसे यह अन्याय बर्दाश्त करते हो ! पौ फटते ही बड़ी बहादुरी से चिल्लाते हो ! सारा गांव तुम्हारी आवाज सुनकर जाग उठता है। किन्तु अपने नन्हें बच्चों की रक्षा नहीं कर पाते !" मुर्गी ने शिकायत की।

"प्यारी, मैं मनुष्यों से किस प्रकार लड़ सकता हूं ? पूरब की ओर जब प्रकाश देखता हूं तब मेरे अन्दर से अपने-आप आवाज निकल पड़ती है। उसे मैं नहीं रोक सकता। अपनी शक्ति को दिखाना मेरा ध्येय नहीं है। हां, कई बार मैं लड़ता

भी हूं। किन्तु इन पहलवानों के साथ कभी नहीं। इन लोगों ने हाथ में छुरा और डंडा लेकर हमें-तुम्हें ही क्या, सारे जगत को दबा रखा है।" इतना कहकर मुर्गा एक बार जोर से 'कुकड़ू-कूं' चिल्ला उठा।

"इनसे तो चील ही ज्यादा अच्छी है।" मुर्गी कहने लगी। इतने में उसने देखा कि एक बिल्ली दबे पांव आ रही है। फौरन उसने सब बच्चों को अपने आस-पास दबाकर छिपा लिया। खोये हुए बच्चे को वह उस समय भूल गई। नई चिन्ता में पुराना दुःख याद नहीं रहा। तभी एक बड़ा-सा कुत्ता कहीं से आया। छलांग मारकर बिल्ली पास के पेड़ पर चढ़ गई। एक गिलहरी, जो पेड़ की डाली पर बैठी थी, और भी ऊपर चढ़कर थोड़ी देर पत्तों के बीच में छिपी रही, फिर एक पासवाले पेड़ पर कूदकर चली गई और वहां से बारीक आवाज में 'टि-टि-टि-टि' करने लगी।

इधर घर के अन्दर सुब्बु और कुप्पुस्वामी लंका में मजदूरों के रोजमर्रा के जीवन की कठिनाइयों के बारे में बातचीत कर रहे थे।

कुप्पुस्वामी की पत्नी कह रही थी, "कितना अत्याचार हो रहा है!"

सबकी अपनी-अपनी समस्याएं हैं।
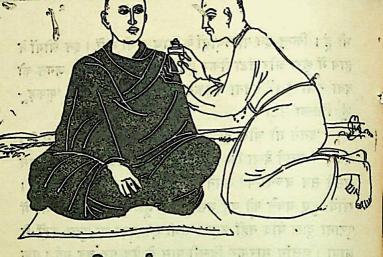
सुदर्शन तेल

एक स्वामीजी थे। उनका नाम था आचार्य ज्ञानसागरजी। बड़े ज्ञानी थे वह। उनके पास एक शिष्य थे। उन्होंने शास्त्रों को खूब पढ़ा था। बड़े विद्वान् हो गये। वह विधिपूर्वक स्नान-ध्यान आदि नित्य-कर्म किया करते थे। कुछ समय बाद यह शिष्य गुरु से अलग होकर नदी के किनारे अपना एक अलग आश्रम बनाकर रहने लगे और उन्होंने कपिलाचार्य नाम रख लिया। बहुत से लोग उनके दर्शनों को आते थे और वह उन्हें धर्म की सीख देते थे।

एक दिन एक बावला-सा वैरागी उनके पास कहीं से आ पहुंचा। उसने स्वामीजी के चरण छुए और कहा, "स्वामीजी, एक तेल लाया हूं। इसे स्वीकार कीजिये। इसकी विधि यह

हैं कि पहले अपने सारे शरीर में इसे अच्छी तरह मल लीजिये और बाद में स्नान कीजिये।" यह कहकर उसने स्वामीजी को तेल भेंट किया।

कपिलाचार्य ने पूछा, "इस तेल में ऐसा क्या गुण है ?"

"चमड़ी के लिए, जो शरीर की रक्षा करती है, यह तेल बहुत ही लाभ का है। इसका सेवन अवश्य करें। मेरा विनम्र निवेदन है कि कम-से-कम चार दिन इसका प्रयोग करके देखें। एक गरीब का यह अनुरोध है। मेरी मनोकामना पूरी करें।" वैरागी ने गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की।

वैरागी की भावुकता से प्रभावित होकर स्वामी कपिला-चार्य ने उसका तेल स्वीकार कर लिया। जैसे वैरागी ने बताया था, उसी प्रकार उसका चार दिन तक उपयोग किया। पांचवें दिन एक विचित्र बात हुई। हमेशा की तरह लोग उपदेश सुनने आये, लेकिन जैसे ही उन्होंने स्वामीजी की तरफ देखा वैसे ही वे उलटे पांव वापस चले गये। प्रसाद लेने के लिए भी नहीं रुके। दूसरे दिन भी यही हुआ। तीसरे दिन भी जब लोगों ने ऐसा ही व्यवहार किया तब स्वामीजी सोच में पड़ गये। उन्होंने सोचा कि अवश्य वैरागी के तेल में कुछ ऐसी बात है, जिससे उनके प्रति लोगों की भक्ति-भावना जाती रही है। शायद ईर्ष्या से वैरागी ने उन्हें कोई बुरा जादू-वाला तेल दे दिया है।

लोगों के तिरस्कार भरे बर्ताव से कपिलाचार्य की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। वह अपने गुरू ज्ञानसागरजी के पास पहुंचे और उनसे उन्होंने सारा हाल कह सुनाया।

गुरुजी ने कहा, "तेल बचा हो तो मुझे दिखाओ।"

तेल हाथ में लेकर उन्होंने सूंघा और कहा, "हां भाई, इसी तेल के कारण ऐसा हुआ है। इस तेल को बनाते समय इसमें सुदर्शन मन्त्र फूंका गया है, जिसके प्रभाव से इसमें एक अद्भुत शक्ति आ गई है। जो कोई इसे अपने शरीर पर लगा कर स्नान करता है, उसके सारे भीतरी भाव बाहर प्रकट हो जाते हैं। उन्हें दूसरों की तेज निगाह से छिपा कर रखना फिर असंभव हो जाता है। हां, कुछ ऐसे भी योगी हैं, जो इस तेल का इस्तेमाल करके मन को एकदम स्वच्छ रखने में लग जाते हैं। हमारें-जैसों के लिए यह तेल काम का नहीं।"

यह सुनकर कपिलाचार्य बड़े शर्माये और वहां से चल दिये।

गुरुजी अपने दूसरे शिष्यों को समझाने लगे, "जबतक मन पक्की दशा को नहीं पहुंच जाता, तबतक शास्त्रों का मनन या पूजा-पाठ आदि बेकार होते हैं। सबसे जरूरी चीज आत्म-शुद्धि है।"

कुछ शिष्यों ने सोचा—सुदर्शन तेल बहुत बुरा होता है। कुछ विचारने लगे—मन को अंकुश में रखना बहुत ही कठिन है। कुछ ने सोचा—मालूम नहीं हम में कब वह शक्ति आयगी, जबकि हम तेल को निडर होकर बदन पर लगा सकेंगे।

लेकिन बाकी कुछ लोगों का विचार था—सरसों अथवा तिल का सादा तेल हमारे लिए काफी है। जादू-मन्त्रवाले तेल हमें नहीं चाहिए।

गोद में गठरी

अंत्तगुडि एक छोटा-सा गांव था। वहां नदी के किनारे एक स्वामीजी रहा करते थे। एक दिन एक बूढ़ा स्वामी-जी के पास आया और उनसे प्रार्थना करने लगा, "स्वामीजी मुझे सद्गति का रास्ता बताइये।"

स्वामीजी ने कुछ उपदेश देने के बजाय उस बूढ़े से पूछा, "आपका इस गांव में कैसे आना हुआ ?"

"मेरा एक पोता है, स्वामीजी, उसकी सगाई पक्की करने आया था।" बूढ़े ने जवाब दिया।

"तो सगाई तय हो गई ?" स्वामीजी पूछने लगे।

"जी हां, आपकी कृपा से हो गई।"

"तब कहिये, मेरे पास कैसे कष्ट किया ?"

"मैंने सुना था कि बहुत-से लोग आपका उपदेश सुनने आते हैं," बूढ़ा बोला, "मैं भी सत्संग का लाभ लेने आया हूं।"

"तो चलिये, नदी के किनारे चलें," स्वामीजी ने कहा और बूढ़े के साथ वह नदी-तट पर चले आये।

नदी के उस पार एक बड़ा मेला लग रहा था। गांव के लोग बड़ी संख्या में मेले में शामिल होने के लिए नाव में चढ़ने को उत्सुक थे।

एक किसान अपनी गठरी को सिर पर लादे हुए आया और जब नाव में सवार होने लगा तो मल्लाह ने उसे रोकते हुए कहा, "देखिये, मैं केवल लोगों को उस पार ले जा सकता हूं, आप अपने साथ किसी सामान का बोझ नाव में न लादें।"

किसान हुज्जत करने लगा, "मैं अपनी गठरी के लिए खास जगह नहीं मांगता। अपनी गोद में रखकर बैठा रहूंगा। मुझे बेकार में क्यों रोकते हो ?"

नाववाले ने आपत्ति करते हुए कहा, "तुम्हारा और तुम्हारी गठरी दोनों का बोझ मेरी नाव नहीं उठा सकती। वह डूब जायगी।"

"तो गठरी को मैं कहां छोड़ दूं ? उसके बिना नदी पार करके मैं करूंगा भी क्या ?" किसान बहस करने लगा।

लेकिन नाववाला जरा भी ढीला न पड़ा। उसने जोर देकर कहा, "जिन-जिनके पास सामान हो वे सब उतर जायं।"

कुछ लोग उतर गये, कुछ अपना सामान धर्मशाला के अधिकारी को सौंपकर खाली हाथ खुशी-खुशी नाव में बैठ गये और कुछ यह कहकर कि हम अपना सामान कहीं नहीं छोड़ सकते, जाने से रुक गये।

नाव निकल गई। जो लोग रह गये उन्हें इस बात का बहुत ही रंज हुआ कि वे मेले में नहीं पहुंच सके।

धर्मशाला का अधिकारी निराश लोगों को समझाने लगा, "यह नाव भार नहीं ढोती। केवल आदमी ही उसमें बैठते हैं।"

किसान बड़ा नाराज था, कहने लगा, "यदि मैं गठरी अपनी गोद में रख लेता तो नाव का वजन कैसे बढ़ जाता?"

अनाड़ी से बात करना बेकार है, यह सोचकर लोग चुप रहे। किसी ने उससे बहस नहीं की।

"देखा?" स्वामीजी बूढ़े से पूछने लगे।

पोते की सगाई तय करने के लिए आनेवाले बूढ़े ने उत्तर दिया, "मैं नहीं समझा।"

"आपने मुझसे सद्गति का रास्ता पूछा था न! तो सुनिये. उसके लिए पहला काम अपना सारा बोझ भगवान को सौंप देना होता है। क्या आप इसके लिए तैयार हैं?" स्वामीजी ने पूछा।

"स्वामीजी, आपने ठीक कहा, लेकिन अपनी घरवाली बुढ़िया से बिना पूछे मैं कुछ नहीं कह सकता।" बूढ़े ने कहा।

"और मेला तबतक खत्म हो जाय तो?"
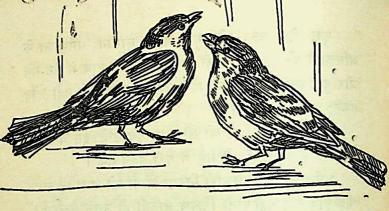
अदालत में चिड़िया

जज शिवशंकर बाबू जिला अदालत में मुकदमा सुन रहे थे। वह अभी हाल ही में न्यायाधीश बने थे। इसलिए बड़े उत्साह के साथ गवाहों से सवाल करते थे। दोनों पक्षों के वकीलों को उन्होंने खूब परेशान किया। मुकदमा भी एक नये प्रकार का था। वह तलाक का मामला था, जिसका कानून अभी-अभी चालू हुआ है।

इसमें वादी थी पत्नी और प्रतिवादी था उसका पति। शादी को हुए डेढ़ बरस हो चुका था। पत्नी की शिकायत थी कि पति और उसके स्वभाव में मेल न बैठ सकने के कारण पति उसे पसन्द नहीं है।

प्रतिवादी पति इस बात का विरोध कर रहा था। वादी के वकील श्रीसतीशचन्द्र एक नौजवान, किन्तु चतुर व्यक्ति थे। प्रतिवादी के वकील श्री राधेबिहारीलाल बूढ़े और पुराने विचारों के आदमी थे। गवाहों से जब जिरह की जा रही थी

तब दो चिड़ियां अदालत के रोशनदान में बैठकर बड़ा शोर मचाने लगीं। राधेबिहारीलालजी को ठीक से सुनाई नहीं पड़ रहा था कि गवाह क्या कह रहा है। शायद वह कुछ ऊंचा भी सुनते थे। बार-बार पूछ रहे थे, "ऐं, क्या कहा ?"

सतीशचन्द्रजी ने कहा, "चिड़ियों ने नाक में दम कर रखा है।"

राधेबिहारीलालजी ने कहा, "हां, ठीक है, चिड़ियां भी इस तलाक के कानून और मुकदमे पर हँस रही हैं।"

चिड़ियों ने जब यह सुना तो वे और भी जोरों से हंसने लगीं। वे समझ गईं कि वकील साहब क्या कह रहे हैं।

नर-चिड़िया ने मादा से पूछा, "क्या तुम भी अदालत में जाओगी ?"

मादा बोली, "हर्गिज नहीं।"

चिड़ियों का इतना शोर हो रहा था कि सतीशचन्द्रजी को ऐसा लगने लगा कि मुकदमा इसके कारण बिगड़ जायगा।

राधेबिहारीलालजी तो हँस-हँस कर गवाहों से प्रश्न पूछते रहे। लेकिन सतीशचन्द्रजी ने कहा कि उन्हें चक्कर-सा आने लगा है और उन्होंने मुकदमे को अगले हफ्ते तक मुलतवी कर देने की अर्जी दे डाली।

चक्कर आने की बात सुनी तो राधेबिहारीलालजी और कुछ न कर सके। उन्होंने पास खड़े एक आदमी से पूछा, "आज कल नौजवानों को यह हो क्या गया है ?" "

उधर मादा-चिड़िया ने नर से कहा, "शायद इन लोगों के कोई बाल-बच्चा नहीं है। बच्चे होते तो पत्नी कभी अपने

आदमी से कचहरी में मुकदमा नहीं लड़ती ।"

"अरे, तुम नहीं जानतीं, ये लोग फिर भी लड़ेंगे," नर ने उत्तर दिया, "चलो, हम तो कम-से-कम इनसे दूर हो जायं ।"

ऐसा कह कर नर वहां से उड़ कर पासवाले एक अस्पताल के अन्दर घुस गया । मादा भी उसके पीछे-पीछे हो ली ।

एक बंदर बैठा इन चिड़ियों की बातें सुन रहा था । वह दांत निकालकर कहने लगा, "इन चिड़ियों को आजकल के समाज-सुधार की बातों की कुछ भी खबर नहीं । इनके बीच में कुछ प्रचार करने की आवश्यकता है ।"

बल्ली बच गई

साम्बशिव मुदालियर के पिता श्री शंकरलिंग मुदालियर बड़े संस्कारी व्यक्ति थे। वह साहित्य और कला के भी बड़े प्रेमी थे। साम्ब्रशिव भी पिता के समान ही साहित्य-संगीत में रुचि लेते थे।

साम्बशिव का विवाह पिता की मृत्यु के बाद हुआ। कन्या रिश्ते में से ही थी—यही कोई बीसेक साल की, खासी अच्छी

लड़की थी। लेकिन साम्बशिव को जब यह पता चला कि उनकी पत्नी गौरीदेवी को शास्त्रीय संगीत का किंचित भी ज्ञान नहीं है तो वह चिन्ता में पड़ गये।

उन्होंने सोचा कि जिस स्त्री को संगीत का ज्ञान न हो, उसके साथ कैसे निर्वाह हो सकता है ?

उनके नगर के निकट मीनाक्षीपुरम् गांव में एक विख्यात गायिका रहती थी। साम्बशिव ने अपनी पत्नी को उसके पास एक नौकरानी के साथ संगीत-शिक्षा के लिए भेजना निश्चित किया। पत्नी को विदा करते हुए उन्होंने कहा, "अच्छी तरह, पूर्ण रूप से संगीत सीखकर आना।"

पत्नी ने छह वर्ष तक संगीत-साधना की। इस बीच उसे गायन-विद्या की अच्छी जानकारी हो गई, लेकिन पतिदेव को विश्वास न हुआ कि उनकी पत्नी अभी ढंग से गा सकती है या नहीं ? उन्होंने अपने मुनीम को मीनाक्षीपुरम् भेजा कि वह यह मालूम करके आयें कि गौरीदेवी ने संगीत में कहां तक प्रगति की है।

मुनीमजी ने गौरीदेवी के पास से लौटकर अपने मालिक को सूचित किया, "मालकिन गाती तो स्वर में है, लेकिन उनका गाना तालबद्ध नहीं होता।"

मुनीमजी संगीत के अच्छे ज्ञाता थे। वह अच्छे-से-अच्छे गवैयों का संगीत सुन चुके थे, इसलिए उनकी सम्मति को टाल देना साम्बशिव को उचित प्रतीत न हुआ। उन्होंने उनसे कहा, "मुनीमजी, तब तो तिरुवारूर के सुब्बैयर के पास गौरीदेवी को भेजना चाहिए। आप इसका उचित प्रबन्ध कर दें।"

मुनीमजी ने तत्काल आज्ञा का पालन किया।

... ...

गौरीदेवी ने और चार वर्ष लगातार तिरुवारूर के सुब्बैयर के पास संगीत सीखा। एक दिन स्वयं सुब्बैयर ने साम्बशिव को कहलवाया कि अब गौरीदेवी को ताल का पूर्ण ज्ञान हो गया है। यदि दो वर्ष और ठहर जायं तो संगीत में वह एकदम पारंगत हो जायंगी। तनिक उन्हें समझाइये कि अभी घर लौटने की जल्दी न करें।

साम्बशिव ने पत्नी को कहलवाया कि वह धीरज से काम लें। संगीत में अधैर्य बिलकुल नहीं चलता। और दो वर्ष सही। वह अपनी शिक्षा पूरी करके ही घर लौटें।

ये दो वर्ष भी बीत गये। इस बीच पुराने मुनीमजी का स्वर्गवास हो गया। उनकी जगह एक नये मुनीम रखे गये। वह तमिल भाषा के एक प्रकांड पंडित के पुत्र थे। उनका नाम था आनन्दरंग पिल्लै। इस बार मालिक ने उन्हें अपनी मालकिन की परीक्षा लेने को भेजा। उनसे साम्बशिव ने कहा, "मुनीमजी, गौरीदेवी ने संगीत में कितनी प्रगति की है, जरा देखकर तो आइये। हां, इस बात का ख्याल न रखियेगा कि वह मालकिन हैं और उनकी परीक्षा कैसे ली जाय?"

नये मुनीमजी परीक्षा लेकर लौटे तो उन्होंने मालिक को आकर विवरण दिया, "संगीत सुन आया। उनमें कोई भी त्रुटि दिखाई नहीं देती। मेरा विचार है कि कोई भी बड़ा संगीतज्ञ मालकिन से अच्छा नहीं गा सकता। किन्तु एक बात है...." इतना कहकर मुनीमजी रुक गये।

"हां-हां, कहिये, क्या बात है ?" साम्बशिव ने मुनीमजी को उत्साहित किया।

"कुछ नहीं, बात सिर्फ इतनी है कि उनके तमिल उच्चारण में तेलुगु भाषा का कुछ-कुछ प्रभाव आ गया है। यदि यह त्रुटि दूर हो जाय तो ठीक रहेगा।" मुनीमजी ने मालिक को अपना सुझाव बता दिया।

सुनकर साम्बशिव कहने लगे, "तुम बिलकुल ठीक कहते हो। संगीत चाहे जितना मधुर हो, शब्दों का उच्चारण अगर स्पष्ट नहीं है और वह व्याकरण-विरुद्ध है तो संगीत का कोई मूल्य नहीं। लेकिन अब इसका उपाय क्या किया जाय, मुनीमजी ?

नये मुनीम ने उत्तर दिया, "आप इसकी चिन्ता न करें। श्रीलंका में तमिल भाषा के एक सुप्रसिद्ध पंडित हैं। वह बड़े विद्वान् हैं। मालकिन कुछ समय उनके पास रह आयें तो सब ठीक हो जायगा।"

यही हुआ। श्रीलंका में दो वर्ष रहकर गौरीदेवी ने तमिल व्याकरण का अध्ययन किया। शिक्षा खूब अच्छी तरह से हुई और उसे समाप्त करके वह आखिर घर लौटीं।

लेकिन इस बीच साम्बशिव का स्वास्थ्य बिगड़ गया। उन्होंने बीच में कुछ मामूली दवाइयां लीं, लेकिन उन दवाइयों से कुछ और नई तकलीफें पैदा हो गईं।

अन्त में उन्होंने मद्रास जाकर एक विख्यात डाक्टर को दिखाया। डाक्टरने उनसे कहा, "पचास वर्ष की उम्र के बाद अगर कोई बीमारी हो जाए तो वह जल्दी-से नहीं जाती। आपने अब तक जिन दवाइयों का सेवन किया है, यह उन्हीं का परिणाम है।"

इधर गौरीदेवी घर लौट चुकी थीं, इसलिए साम्बशिव ने सोचा कि चलो, अब घर ही चला जाय। उन्होंने डाक्टर से कहा, "अब तो मुझे घर जाने की आज्ञा दीजिये। ईश्वर को जो मंजूर होगा, वही होगा।"

वर्षों बाद जब पति ने पत्नी को देखा तो एकाएक उन्हें वह पहचान नहीं सके। गौरीदेवी भी पति को देखकर चौंक पड़ीं। उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि वह उन्हीं के पतिदेव हैं।

गौरीदेवीने अपने तान-तम्बूरे को एक तरफ रख दिया और वह पति की सेवा में जुट गईं। देखते-देखते छह महीने के भीतर साम्बशिव बिना किसी दवाई के एकदम चंगे हो गये। दोनों पति-पत्नी अब बड़े आनन्द से रहते। संगीत और व्याकरण के विषय में दोनों ने एक-दूसरे से कभी कोई जिक्र तक नहीं किया।

कुछ दिनों बाद घर में एक कन्या का जन्म हुआ। बड़े प्यार से वे उसे 'बल्ली' कहकर पुकारते लगे।

बल्ली शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की तरह दिन-दिन बढ़ने लगी। जब उसे पाठशाला में दाखिल करने का समय आया तब साम्ब-शिव ने दृढ़ता से घोषणा की, "मैं इसे कहीं पढ़ने नहीं भेजूंगा।"

पत्नी ने प्रतिवाद किया, "यह कैसे हो सकता है!"

"क्यों नहीं हो सकता?"

"लेकिन जरा सोचिये तो," पत्नी समझाने लगी, "आज-कल ऐसी कौन लड़की है जो स्कूल नहीं जाती, नृत्य नहीं सीखती?"

लेकिन साम्बशिव अपने निश्चय पर अटल रहे। उन्होंने लड़की को कहीं बाहर पढ़ने नहीं भेजा, क्यों कि इस बात को वह स्वयं अनुभव करके देख चुके थे।

कुच्चुप्पालयम के बच्चे

कुच्चुप्पालयम दक्षिण भारत में एक छोटा-सा गांव है। गांव में पाठशाला के पीछे एक मैदान है, जहां बच्चे मिलते, बात करते और खेलते हैं।

"अरे चिन्नू, तुम्हारे पिताजी क्या काम करते हैं ?" एक दिन अप्पू ने चिन्नू से पूछा।

चिन्नू बोला, "मेरे पिताजी राज हैं। घर बनाते हैं। अच्छे कारीगर हैं। तुम ईंट और सीमेन्ट के बारे में कुछ नहीं जानते होगे।"

अप्पू ने कहा, "मुझे उनसे क्या लेना। मैं तो पढ़-लिखकर बाबू बनूंगा। दफ्तर में काम करूंगा।"

छिन्नू बोला, "तुम बन चुके बाबू! दफ्तर में झाड़ देने का काम करोगे?"

"अरे, लड़ते क्यों हो? मुझे बताओ, मामला क्या है?" तीसरा लड़का बीच में आकर बोलने लगा। उसका नाम था बली।

"बली, तुम्हारे पिताजी क्या काम करते हैं?" अप्पू ने उससे भी पूछा।

"मेरे पिताजी दूकान करते हैं," बली ने कहा, बैंक की दूकान।"

"बैंक की दूकान कैसी होती है?" अप्पू और चिन्नू दोनों ने एक साथ पूछा।

"बताता हूं।" बली ने कहा।

"मेरे पिताजी रुपयों को एक संदूक में बन्द कर देते हैं। कुछ दिन बाद उनके बच्चे होते हैं। उन बच्चों को निकालकर दूसरे संदूक में बन्द कर देते हैं। उनके भी छोटे-छोटे बच्चे होते हैं। इस तरह रुपये बढ़ते चले जाते हैं।"

"अरे, मालूम होता है ये लोग मुर्गे पालते हैं। मुर्गियों को ही हमने अण्डे देते हुए देखा है। रुपये थोड़ ही बच्चे देते होंगे!" चिन्नू और अप्पू बोल उठे।

"तुम लोगों को विश्वास न होता हो तो चलो, मास्टरजी से पूछें कि रुपयों से रुपये पैदा होते हैं कि नहीं?" बली ने कहा।

"बाप रे बाप ! मैं मास्टरजी से कुछ नहीं पूछूंगा वह मार बैठेंगे ।" अप्पू ने कहा ।

... ...

"अरे, सुना ! कन्हैया पैसा कमाने परदेश, लंका चला गया ।" एक दूसरे रोज अप्पू ने साथी लड़कों से कहा ।

"क्यों, क्या बात हुई ?" सुब्बू ने पूछा ।

अप्पू ने जवाब दिया, "कन्हैया के पिता ने वली के पिता से काफी पैसा उधार ले रखा था । वह पैसा नहीं लौटा सका, क्योंकि उसने सारा पैसा शराब पीने में उड़ा दिया था । इस पर बली के पिता ने उसको घर से निकालकर घर नीलाम करवा दिया ।"

सुब्बू ने पूछा, "क्या शराब पीने से सारा पैसा बरबाद हो जाता है ?"

"हां, जरूर ।" अप्पू ने कहा । अप्पू अपने को हमेशा दूसरों से समझदार मानता था ।

"तो लोग शराब क्यों पीते हैं ?" सुब्बू ने पूछा ।

"कभी तुमने शराब सूंघी है ?" अप्पू ने पूछा ।

"कभी नहीं । क्यों, कैसी होती है ?"

"बहुत तेज बदबू आती है उसमें । पास भी नहीं जाया जाता ।"

"यहां से लंका कितनी दूर है?" सुब्बू ने दूसरा प्रश्न किया।

"मुझे नहीं मालूम ।" अप्पू ने कहा ।

सुब्बू ने कहा, "चलो, मास्टरजी से पूछते हैं ।"

अप्पू बोला, "नहीं-नहीं, मास्टरजी मार बैठेंगे ।"

... ...

गांव के बच्चे मास्टर से बहुत डरते थे। वह थे तेज, मिजाज के। बच्चों की कमबख्ती कि इन्स्पेक्टर साहब को वह मास्टर बहुत पसंद थे।

मास्टरों का बच्चों पर क्रोध करना ठीक नहीं, बल्कि उनके प्रश्नों का उत्तर सहिष्णुता के साथ देना चाहिए। यह भी बात है कि सभी मास्टर खराब नहीं होते।

फूल, मधुमक्खी और कीड़ा

"हे सुगन्धित फूल, तुम हमारे ऊपर कितना उपकार करते हो ! तुमसे शहद पी-पीकर हम लोग आराम से जी रही हैं। लेकिन यह तो बताओ, तुमने शहद उत्पन्न करने की विद्या सीखी कहां से ?" मधुमक्खी ने एक दिन फूल से उसका रस चूसते हुए पूछा ।

फूल ने उत्तर दिया, "प्यारी मधुमक्खी। हम बहुत खुश हैं कि तुम हमारा शहद पीने आती हो । तुम्हें पता नहीं कि इससे हमारा कितना उपकार होता है ।"

"अच्छा ! इससे तुम्हें भी कुछ लाभ हो सकता है, इसका

हमें पता न था। कुछ हमें भी तो बताओ।" मक्खी पूछने लगी।

"एक शर्त है। मंजूर हो, तो सुनाता हूं।" फूल बोला, "फिर यहां आकर शहद पीना बन्द न कर देना।"

मक्खी ने उसकी बात मान ली। फूल ने मक्खी को बताया कि शहद की मक्खियां फूलों के लिए पुरोहित का काम करती हैं। एक फूल से दूसरे फूल की शादी उन्हीं के द्वारा होती है। उसने बताया, "तुम्हीं लोगों के कारण हमारी सृष्टि बनी रहती है।"

"देर हो गई, अब घर पहुंचना चाहिए," मक्खी कहने लगी, "यदि लौटने में देर हो जाय तो हमारी मां हमसे नाराज हो जाती है।"

"रास्ता याद है न ? सुबह से एक पौधे से दूसरे पर, कभी इस फूल पर, कभी उस फूल पर, फिर रही हो।" फूल ने पूछा।

"रास्ता भूलना क्या होता है ? यहां से मैं सीधी घर पहुंच जाऊंगी। हम लोग कभी राह नहीं भूलतीं। हमारी मां हमें बाहर से ही अपने पास खींच लेती है।" मक्खी बोली।

फूल को बड़ा आश्चर्य हुआ। कहने लगा, "काश ! मेरे भी पंख होते तो मैं भी तुम्हारी तरह इधर-उधर उड़ता फिरता।"

"पगले कहीं के ! तुम इधर-से-उधर उड़ने लगते तो मैं कहाँ बैठती ?" एक चिड़िया, जो पेड़ के ऊपर बैठी सब-कुछ सुन रही थी, फूल से कहने लगी।

"चिड़िया, मेरी बहन ! देखो, मुझे एक कीड़ा कब से सता रहा है। बड़ी खुजली मच रही है। इसे यहां से ले जाओ और अपने बच्चे को खिलाओ।" फूल बोला।

चिड़िया ने कीड़े को उठा लिया। इतने में माली आया। उसने फूलवाले पौधे को पानी पिलाया। फूल कहने लगा, "माली बहुत अच्छा है। हमें रोज पानी पिलाता रहता है। यह नहीं होता तो हम प्यास के मारे सूखकर मर जाते।"

लेकिन माली की समझ में फूल की भाषा नहीं आई। वह चुपचाप अपना काम करता रहा।

"बेचारा कितना परिश्रम करता है!" फूल ने सहानुभूति प्रकट की।

इसी बीच माली का छोटा-सा लड़का कहीं से भागकर आया और कहने लगा, "बापू, पानी मैं दूंगा।"

वह अपने बापू के हाथ से घड़ा छीनने लगा। माली ने उसे रोका और समझाया कि घड़ा भारी है, वह उसे उठा नहीं पायगा। लेकिन जब बच्चा रोने लगा तो उसने उसे एक लोटे में पानी भरकर दे दिया।

बालक लोटे से पौधों को सींचने लगा। फूल खुश हो गया। बच्चों के नन्हें-नन्हें हाथों से पानी पीकर पेड़-पौधे सदैव हरे हो उठते हैं।
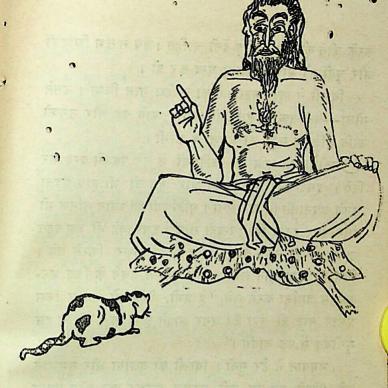
मार्जारी

ऋषि अगस्त्य एक दिन एक बिल्ली को बुलाकर उपदेश देने लगे, "हे बिल्ली, तुम्हारा जीवन पापों से भरा हुआ है। जंगल-वासी तुम्हारे मामू बाघ के पास तो हत्या के सिवा कोई चारा नहीं। वह कभी शाकाहारी नहीं बन सकता। लेकिन तुम तो मनुष्यों के बीच रहती हो। दूध-दही, मक्खन और घी प्राप्त करना तुम्हारे लिए आसान है। तुम्हें हत्या

करके जीने की आदत छोड़ देनी चाहिए। अब से तुम चिड़ियों और चूहों को मारकर खाना बन्द कर दो।"

बिल्ली ने ऋषि महाराज का उपदेश मान लिया। उसने सोचा—अब तक जो हुआ सो हुआ। आगे वह और उसकी जाति अहिंसक मार्ग का अनुसरण करेगी।

नतीजा यह हुआ कि बिल्लियों ने चूहे पकड़ने बन्द कर दिये। इधर-उधर से मक्खन और दूध जो भी हाथ पड़ता उससे अपना निर्वाह कर लेतीं। गृहिणियों का ध्यान तनिक भी इधर-उधर हटता कि दूध-दही साफ। इधर चूहे भी अब बहुत उपद्रव मचाने लगे। वे सब जगह निडर होकर फिरने लगे। अन्न का नाश होने लगा। लोग चूहों से बचने के लिए भगवान से प्रार्थना करने लगे, "हे प्रभो, देखते हो, अनाज किस प्रकार नष्ट हो रहा है। अगर आपने कृपा नहीं की तो हम मुसीबत में पड़ जायंगे।"

भगवान ने टेर सुनी। बिल्ली को बुलाया और समझाने लगे, "देखो, यह दूध, दही, मक्खन लूटकर तुम लोग अच्छा काम नहीं कर रहीं। यह बुरी आदत है। इसे छोड़ दो।"

बिल्ली ने भक्तिपूर्वक भगवान का उपदेश सुना। फिर उसने थोड़ा-सा व्यंग्य करते हुए कहना प्रारम्भ किया। "भगवन्; हमने तो यह सुना है कि आप भी कभी दही-मक्खन की चोरी किया करते थे।"

"गलत बात है।" भगवान ने उत्तर दिया, "मैंने शायद बचपन में वैसा किया होगा। उसका अनुकरण तुम लोग न करो। तुम्हारा कुल-धर्म तो चूहों को पकड़ना है। उसमें किसी

प्रकार का दोष नहीं। विश्वास न हो तो अर्जुन से पूछ लेना। मैंने ये बातें उसे खूब समझाई हैं।"

"अच्छा !" बिल्ली कहने लगी, तब तो हम इस बाल-विद्या का भी अनुकरण करेंगी और साथ ही आपने जैसा अर्जुन को उपदेश दिया, उस कुल-धर्म का भी पालन करेंगी। जो आज्ञा, हम फिर से चूहे पकड़ना शुरू किये देती हैं। लोगों से कहिये कि वे दूध-मक्खन हमारी नजर से दूर रखा करें, लेकिन यदि वे हमारी पहुंच में आ गये तो हम उन्हें छोड़ेंगी नहीं।" इतना कहकर बिल्ली एक पेड़ पर चढ़ गई।

भगवान हँस पड़े। उन्होंने बिल्ली से कहा, "देखो, तुम लोगों को सफाई भी सीखनी चाहिए। इधर-उधर गन्दगी करना बुरा होता है। कहीं अलग जाकर शौचादि क्रिया करो और फिर अपने पंजों से मिट्टी खुरचकर उससे ढंक दिया करो। समझीं ?"

पेड़ पर बैठे-बैठे ही बिल्ली बोली, "अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।"

"और रोज नहाया भी करो।" भगवान ने कहा।

"भगवन्, यह करने को न कहो। हमें पानी से बहुत डर लगता है।" बिल्ली ने कहा।

"नीचे उतरकर तो आओ, मैं बताता हूं।" भगवान बोले।

बिल्ली भगवान के निकट आई।

"अपनी जीभ दिखाओ।" भगवान ने कहा।

बिल्ली ने भगवान को अपनी जीभ दिखा दी। भक्त-

वत्सल भगवान से भला क्या डरना !

भगवान ने अपनी अंगुलियों से बिल्ली की जीभ का स्पर्श किया और कहा, "देखो, तुम्हारी जीभ ही तुम्हारे लिए गंगा है। रोज नियम से अपने शरीर को जीभ से चाटकर स्नान कर लिया करो। तुम्हें अब से 'मार्जारी' नाम से पुकारूंगा।"

तब से बिल्ली ने रोज ऐसा ही करना शुरू कर दिया।